Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

ओ३म्

पाक्षिक

परोपकारी

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

परोपकारिणी
दयानन्दसरस्वती

वर्ष - ५४ अंक - १२ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र जून (द्वितीय) २०१३

डॉ. आशुतोष पारीक

डॉ.पुष्पा गुप्ता

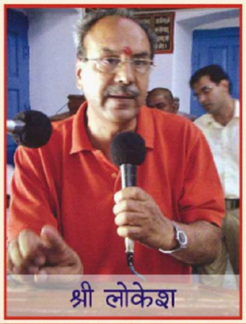
श्री लोकेश

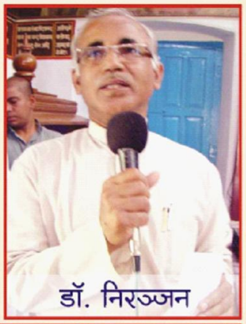
डॉ. निरञ्जन

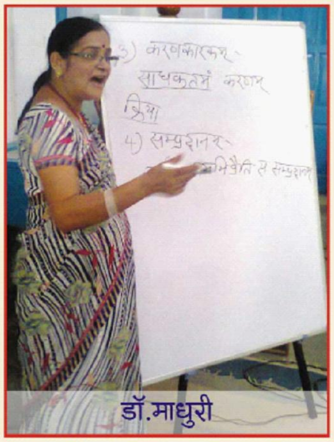
डॉ.माधुरी

रंजना मेहरा

आचार्य सोमदेव

संस्कृत सम्भाषण शिविर

दिनाङ्क - १७ से २३ मई २०१३

ऋषि उद्यान, अजमेर

१

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ५४ **अंक** : १२
दयानन्दाब्द: १८९
विक्रम संवत्: ज्येष्ठ शुक्ल, २०७०
कलि संवत्: ५११४
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११४

सम्पादक
प्रो. धर्मवीर

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

-परोपकारी का शुल्क-

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु., **त्रिवार्षिक**-५८० रु., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-२००० रु.।

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस. डालर, **द्विवार्षिक**-९५ पा./१५२ डा., **त्रिवार्षिक**-१४० पा./२२५ डा., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-५०० पा./८०० डा.।

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

जून द्वितीय २०१३

अनुक्रम

१. आर्यसमाज की प्रचलित अनुचित...	सम्पादकीय	०४
२. भौतिक एवं आध्यात्मिक आवेग	स्वामी विष्वङ्	०७
३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	राजेन्द्र जिज्ञासु	०८
४.जिज्ञासा-समाधान	सोमदेव	११
५. वास्तविक धर्म और उसका स्वरूप	प्रो. सत्यदेव	१२
६. हमारी ओडिशा यात्रा	मुमुक्षु मुनि	१४
७. आधुनिक भारतीय पुनर्जागरण का...	डॉ. रघुवंश	१८
८. महर्षि दयानन्द सरस्वती और.........	गौरीशंकर	२३
९. डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल का......	डॉ. सुजाता	२८
१०.प्रमाणिक-व्यवहार	नारायण प्रसाद	३०
११. ऋषि दयानन्द प्रकरण पर मेरे.......	ओममुनि	३२
१२. प्रभु किनकी रक्षा करता है?	महा. चैतन्यमुनि	३३
१३. पुस्तक-परिचय		३५
१४. पाठकों की प्रतिक्रिया		३६
१५. संस्था-समाचार		३७
१६. आर्यजगत् के समाचार		३९

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

आर्यसमाज में प्रचलित अनुचित परम्पराएँ

चित्र पर फूल चढ़ाना–लोग श्रद्धावश समाधि पर, चित्र पर फूल चढ़ाते हैं। बहुत बार उनका विचार उसको चेतन मानना नहीं होता। उनका केवल इतना अभिप्राय रहता है कि जिस स्थान पर वे आये हैं वहाँ के लोगों को सन्तुष्ट करना उनके प्रिय व्यक्ति के चित्र पर फूल चढ़ाकर अपना आदर भाव अभिव्यक्त करना। इसमें हमारी मनोदशा कब आदर भाव प्रकाशित करने के स्थान पर याचना के भाव में बदल जाती है, इस बात का पता ही नहीं चलता। व्यक्ति कभी भय के कारण भी ऐसा करता है। भयभीत व्यक्ति से भय निवारण का प्रलोभन देकर कुछ भी कराया जा सकता है। इसका सबसे नया उदाहरण पूर्व रेल मन्त्री पवन कुमार बंसल हैं। जब लगने लगा कि मन्त्री पद जाने वाला है तब और सब उपायों के साथ नजर उतारने के लिए बकरे की पूजा भी कर ली जन सामान्य की दृष्टि में भारत सरकार का मन्त्री तो बहुत बुद्धिमान् होता होगा परन्तु नजर उतारने के लिए बकरे की पूजा करने वाले को कौन बुद्धिमान् कहेगा?

जब किसी का देहान्त हो जाता है तब अर्थी को सजाने के लिए फूलों की माला लगाई जाती है। लगे हाथ आने वाले व्यक्ति माला लेकर मृतक के अन्तिम दर्शन करने लगते हैं तब माला हाथ में है, तो शव पर चढ़ानी ही पड़ेगी। घर के सदस्य भी नारियल माला लेकर परिक्रमा करते हैं, शव पर चढ़ाते हैं। मृतक से प्रार्थना भी करते हैं, प्रेम, मोह या भावुकता में शव से लिपट जाते हैं तब समझदार लोग उन्हें छुड़ाकर शव को उठा लेते हैं, वे जानते हैं यह सब अज्ञान और व्यर्थ है। सभी जानते हैं मृत्यु के पश्चात् शव को जला देना ही ठीक है। सोचने की बात है जब शरीर से जीवात्मा निकल गया वह शरीर निरर्थक हो गया, उससे कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं हो सकता, फिर शरीर के चित्र से क्या प्रयोजन सिद्ध हो सकता है? स्वामी रामसुख दास के शब्दों में आत्मा रहित शरीर मुर्दा है तो फोटो मुर्दे का भी मुर्दा है। जब शव को जला दिया, तो चित्र उस व्यक्ति की स्मृति कराता है। उससे सम्बन्धित कार्यक्रम के अवसर पर आप उसका चित्र लगाकर उसकी स्मृतियों को जगाते हैं, चित्र को सजाते हैं, जिससे चित्र सुन्दर लगे परन्तु चित्र पर फूल चढ़ाकर केवल आप जिसके घर आये उनको सन्तुष्ट करते हैं। यदि चित्र जिसका है उसका प्रियजन फूल चढ़ाएगा, तो केवल आदर व्यक्त नहीं करेगा वह उससे प्रार्थना करेगा, उसके सामने रोएगा, उसको जीवित मानेगा। अपने घर में रखकर प्रतिदिन उस पर भी फूल चढ़ाएगा। दिल्ली में एक आर्यसमाज के कार्यक्रम के समय परिवार में भोजन के लिए गये। गृहस्वामी बड़ा ही भगवद् भक्त था उसने अपने पूजा के कमरे में बीस–पच्चीस भगवानों के चित्र लगा रखे थे, उन्हीं चित्रों के मध्य उसने अपनी बेटी का चित्र लगाया हुआ था जो एक दुर्घटना में मारी गई थी। बस सभी भगवान मनुष्य के इसी पद्धति से भगवान बन जाते हैं। हमारी बुद्धि कब जड़ को चेतन समझने लगती है इसका हमें पता नहीं चलता।

आजकल हर शोक सभा में मृतक का चित्र लगा होता है। टोकरों गुलाब की पंखुड़ियाँ उसके पास रखी होती हैं। सैकडों–हजारों व्यक्ति पंक्ति बनाकर खड़े हो जाते हैं और बारी–बारी से उस चित्र पर फूल चढ़ाते हैं, वहाँ केवल जिसके घर गये हैं, उसे सन्तुष्ट करना हमारा उद्देश्य होता है। एक बार एक आर्यसमाज के नेता पंक्ति में खड़े थे मैं भी थोड़ा उनसे पीछे था। देखें नेता जी क्या करते हैं? पंक्ति आगे बढ़ी नेताजी ने फूल उठाये चित्र के आगे रखे हाथ जोड़े, सिर झुकाया जैसे ही मुड़े मैंने पूछा फूल चढ़ा दिये, तो सफाई देते हुए कहने लगे ये व्यक्ति तो स्वर्गवासी हो गया। मैंने कहा फिर तो स्वामी दयानन्द को भी आपकी पूजा मिलनी चाहिये। तो वे हा हा कर हंसने लगे।

आजकल कोई भी समारोह हो, विद्यालय हो, तो सरस्वती की प्रतिमा या चित्र होता है अथवा संस्था या उनके विचार से जुड़े व्यक्ति का चित्र रखकर उसके सामने दीपक जलाते हैं, चित्र को माला पहनाते हैं। धीरे–धीरे यह रोग आर्यसमाजों व आर्य संस्थाओं में भी घर करने लगा है। भारत का चित्र बनाकर उसके मध्य महिला का चित्र बना देते हैं और भारत माता की पूजा करने लगते हैं। माला चढ़ाते हैं, आरती उतारते हैं, दीपक जलाते हैं। ऐसे समय में ऐसा न करने वाले व्यक्ति की दशा बड़ी विचित्र होती है। ऐसा लगता है यह व्यक्ति अमुक देवी–देवता का आदर नहीं करता। भारत माता का भक्त नहीं है। परन्तु ऐसे करके मूर्खता को प्रोत्साहित करना होता है। चित्र पर फूल चढ़ाने की परम्परा ने आज एक अनिवार्य पाखण्ड का रूप ले लिया है। ऐसा करते हुए मन में एक भाव रहता है, तो फिर क्या हो गया? हुआ तो कुछ नहीं हम मूर्खतापूर्ण परम्परा के संवाहक बन जाते हैं। और कुछ नहीं हुआ। अत: यह परम्परा त्याज्य है। लोग भावुकतावश ऐसा करते हैं। करवाने वाले जो बात स्वामी दयानन्द कृत सत्यार्थप्रकाश की जाट जी–पोप जी की कथा में जो ठग विद्या समझायी है, इसमें भी वही सब करते हैं।

गोमाता की जय–समाज का जब भी सत्संग होता है कोई कार्यक्रम होता है जय बोलने की परम्परा है। यह परम्परा पौराणिकों और मुसलमानों, सिक्खों से हमने ली है वे भी अपने कार्यक्रम और सत्संग के बाद जप के नारे लगाते हैं आर्यसमाज

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

में भी लगते हैं। नारे लगाने की दो परिस्थितियाँ-एक तो सामान्य यज्ञ सत्संग का कार्यक्रम है जिसमें नारे लगाने की लम्बी श्रृंखला निरर्थक होती है। दूसरी परिस्थिति विशेष समारोह मेला, जुलूस, विशेष कार्यक्रम जहाँ बड़ा जन समूह हो या प्रदर्शन हो, वहाँ नारे, गीत ऊँची आवाज में लगाये जाते उनका उद्देश्य उपस्थित लोगों में उत्साह भरना होता है, वहाँ यह लम्बा क्रम उचित कहा जा सकता है। प्रारम्भ में जयकारों की संख्या थोड़ी थी। जो बोले सो अभय वैदिक धर्म की जय, भारत माता की जय। इन नारों में धीरे-धीरे वृद्धि होती रही इसमें प्रमुख कारण रहा पौराणिक भाइयों को सन्तुष्ट करना इसके लिए हमने राम की जय, कृष्ण की जय बोलनी प्रारम्भ की। शान्ति हो, कल्याण हो, सद्भावना हो का नारा हमने पौराणिक भाइयों की नकल से लिया है। हम किस प्रकार दूसरों को सन्तुष्ट करने के लिए अपने कार्यक्रम बनाते हैं उसका एक उदाहरण स्वामी ओमानन्द जी महाराज सार्वदेशिक सभा के प्रधान चुने गये थे उस अवसर पर आर्यसमाज के एक नेता ने मुझे एकान्त में ले जाकर एक चर्चा की। हो सकता है वह चर्चा उन्होंने औरों से भी की हो। क्योंकि इन महानुभाव ने गुरुकुल कांगड़ी में पचास लाख रुपये मिलेंगे और सिक्खों से हमारा प्रेम बढ़ेगा अत: विश्वविद्यालय में गुरु गोविन्द सिंह पीठ स्थापित करने का प्रस्ताव किया था, परन्तु कुछ लोगों के तीव्र विरोध के कारण कार्यान्वित नहीं किया जा सका। यह भी उन्हीं महानुभाव का प्रस्ताव था, वे कहने लगे आजकल आर्यसमाज में और सिक्ख समुदाय में दूरी बढ़ रही है। अत: इसके लिए हमें कुछ प्रयत्न करना चाहिए। जिससे यह दूरी कम हो सके, मैंने कहा आपकी बात बिलकुल ठीक है, हमें क्या करना चाहिए तब उन्होंने अपना विचार दिया हमें अपने आर्यसमाज के सत्संग में गुरु गोविन्द सिंह जी की जय बोलनी चाहिए। मैंने कहा प्रस्ताव तो बहुत अच्छा है तब वे बोले तो फिर मैं बाहर जाकर घोषणा कर दूँ। तब मैंने निवेदन किया मेरी एक बात और सुन लें, फिर घोषणा कर दें। मैंने उनसे निवेदन किया, आप सिक्खों से बात कर लें और स्वर्ण मन्दिर में स्वामी दयानन्द की जय बुलवा दें फिर हमें समाज में गुरु गोविन्द सिंह की जय बोलने में कोई आपत्ति नहीं। पता नहीं क्यों वे चुप हो गये और उन्होंने वह घोषणा नहीं की।

कुछ लोगों को पता नहीं गोमाता की जय शब्द अच्छा नहीं लगा, अनेक स्थानों पर गो के साथ अन्य पशुओं के नाम भी लेते देखे गये। उनके विचार से अकेले गाय की जय दूसरे पशुओं के साथ अन्याय है। अब उन्हें क्या बतायें गाय को क्यों चुना गया। यह तो वेद, वैदिक साहित्य, ऋषि-मुनियों से पूछना होगा, उन्होंने ऐसी भूल क्यों की। साथ हमारे भाषा-ज्ञान का क्या होगा जिसमें हम संकेत का अभिप्राय न समझ सकें। यही संकट गोमाता की जय में भी है। मुझे भली प्रकार से स्मरण है। बीस-पच्चीस वर्ष पूर्व आर्यसमाजी व्यक्ति ने एक लेख लिखा और इस निर्देश के साथ मुझे भेजा कि इसमें कोई परिवर्तन नहीं होगा। उनकी ज्येष्ठता, श्रेष्ठता के नाते मेरे द्वारा उसमें परिवर्तन तो सम्भव नहीं था, परन्तु मैंने उस लेख पर कुछ प्रश्न पूछ लिए जो आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं। लेखक का कहना था गाय तो पशु है उसकी जय-पराजय क्या होती है, उसकी तो रक्षा और पालना होनी चाहिए उनका तर्क ठीक था लोगों ने संशोधन कर लिया, गो-माता की जय के स्थान पर गो-माता की रक्षा हो, बोलने लगे। कुछ लोगों को यह भी अधूरा लगा, कुछ स्थानों पर कहा जाने लगा सब गो का पालन व रक्षा करें। गत दिनों जब जबलपुर आर्यसमाज में गया तो इसमें संशोधन हो चुका था वहाँ कहा जा रहा था गाय का दूध पियेंगे तो हमारे बच्चे बलवान बनेंगे और आगे क्या होगा ईश्वर जाने।

जब लेखक ने कहा गाय पशु है उसकी जय-पराजय क्या होती है, तब मैंने उनसे पूछा भारत माता तो मिट्टी, पत्थर है, इसकी जय-पराजय क्या होती है? स्वामी दयानन्द जी का स्वर्गवास हो गया उनकी जय-पराजय क्या होती है? तब वे कुछ उत्तर तो न दे सके परन्तु उनका अभियान चलता रहा। सामान्य लोग भाषा के विषय में जानकारी नहीं रखते अत: किसी भी बात को अधिक सरल बनाने का प्रयत्न करते हैं। जय का अर्थ तलवार या गोली की हार-जीत न होती इसका अभिप्राय समृद्धि और ह्रास होता है। जय का अर्थ वृद्धि है जिसकी भी हम वृद्धि चाहते हैं, उसकी जय बोलते हैं। आज ईसा की जय हो रही है और मोहम्मद की जय हो रही है, इसका अभिप्राय उनके विचारों का प्रचार-प्रसार बढ़ रहा है, यही उनकी जय है। जय भारत माता की होती है, जय वेद की होती है, जय वैदिक धर्म की होती है, फिर गोमाता की जय क्यों नहीं, रक्षा करो, पालन करो, दूध पियो, छप्पर डालो, क्या होता है? यह हमारी भाषा-ज्ञान का अभाव मात्र है। हमको किसी ने कुछ समझा दिया देखा-देखी प्रारम्भ कर दिया, उसके उचित अनुचित पर विचार करने की आवश्यकता समझी ही नहीं। सत्संग में भारत माता की जय केवल आर्यसमाज में बोली जाती है, किसी चर्च में, किसी मस्जिद में, किसी गुरुद्वारे में या किसी धार्मिक कार्यक्रम में नहीं बोली जाती, क्योंकि आर्यसमाज का भारत में उदय हुआ, अधिक विस्तार भी नहीं हुआ, हमारे सत्संग में भारत माता की जय ठीक है, परन्तु विदेश में बोलेंगे गलत होगा। अत: सन्दर्भ के बिना कोई बात की जाती है या कही जाती है, तो वह व्यर्थ है। जय निमित्त और लक्ष्य सूचक होने चाहिए। अत: वैदिक धर्म की और स्वामी दयानन्द की जय में सबकी जय स्वयं होती है। आप भारत माता की जय, गो-माता की जय बोलते आ रहे हैं, बोलते रहिए, नये पहाड़े गढ़ने की आवश्यकता कहाँ है।

मातृशक्ति-आर्यसमाज के सभा सत्संगों में एक सम्बोधन सम्भवत: बहुत अच्छा मानकर किया जाता है, परन्तु इसको

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

स्वीकार करने का कारण आजतक समझ में नहीं आया, इस सम्बोधन से मेरा परिचय सबसे पहले छात्र जीवन से हुआ जब मैं व्याख्यान देने के लिए वानप्रस्थ आश्रम के सत्संग में गया। आश्रम के अधिकारी गुरुकुल में वेद पढ़ने वाले छात्रों को अपने आश्रम में निवास की सुविधा देते थे तथा सत्संग, यज्ञ आदि के अवसर पर आप प्रवचन आदि करवा कर उनको अभ्यास का अवसर भी प्रदान करते थे। आश्रम की इस सुविधा से अनेक छात्र लाभान्वित हुए हैं। उन्हीं दिनों जब मैं आश्रम के सत्संग में प्रवचन करके लौट रहा था, एक वानप्रस्थी मुझे अपनी कुटिया पर ले गये और मेरे व्याख्यान की प्रशंसा करते हुए उसमें सुधार करने का सुझाव भी दिया। उन सुझावों में मुख्य सुझाव था, माताओं-बहनों सम्बोधन न करके, मातृशक्ति सम्बोधन करना अधिक उचित है, और कारण बताते हुए उन्होंने कहा यदि हम मातओं-बहनों सम्बोधन करें, तो हो सकता है उस भीड़ में हमारी पत्नी भी बैठी हो। अत: मातृशक्ति सम्बोधन करना ठीक है। यह सम्बोधन करना मुझे कभी रूचा नहीं। इसके बाद एक सरदार जी का चुटकुला सुना था सरदार जी सम्बोधन करने खड़े हुए उन्होंने माताओं-बहनों सम्बोधन किया उन्हें फिर याद आया सामने भीड़ में उनकी पत्नी भी बैठी है तब सरदार जी ने सम्बोधन में एक वाक्य और जोड़ दिया 'इक नू छड के'। यह सोच बढ़िया सोच नहीं है। जब समूह को सम्बोधित करते हैं तब व्यक्तिगत सम्बन्ध कोई अर्थ नहीं रखता, अन्यथा शिष्टाचार, कदाचार में ही परिवर्तित हो जायेगा किसी ने एक महिला को सम्बोधिन किया माता जी उसका पति बोला तू मेरी पत्नी को अपने पिता की पत्नी बनाना चाहता है। यह मूर्खतापूर्ण सोच होगी। हम मातृशक्ति कहकर क्या कहने से बचना चाहते हैं। हम माताओं-बहनों ही तो नहीं कहना चाहते क्या मातृशक्ति सम्बोधन को माताओं-बहनों से किसी भी रूप में श्रेष्ठ कहा जा सकता है, संभवत: नहीं? परन्तु कोई बात चल पड़ती है तो चल ही पड़ती है। इस सम्बोधन पर विमति करते हुए सुना था स्वामी सत्यप्रकाश जी महाराज आर्यसमाज सान्ताक्रूज का कोई कार्यक्रम था कुछ लोग बैठकर चर्चा कर रहे थे संयोग से उस चर्चा में, मैं उपस्थित था, तब स्वामी जी ने कहा था आप मातृशक्ति बोलते हैं, पितृशक्ति तो नहीं बोलते। जब भाषा के अर्थ सामर्थ्य से परिचित नहीं होते तब हमें शब्दों के तरह-तरह के अर्थ दिखाई देने लगते हैं। अत: एक शिष्ट सम्बोधन माताओं-बहनों के स्थान पर मातृशक्ति बोलना हमें अधिक सभ्य बनने की ओर तो नहीं ले जाता।

शतक पारायण-आर्यसमाज ने अपने प्रचार को संक्षिप्त करना प्रारम्भ किया तो उसके उत्सव भी संक्षिप्त हो गये जहाँ उत्सव संक्षिप्त हुए तो यज्ञ को भी संक्षिप्त होना ही था। पहले और बड़े यज्ञ हो या न हो, यजुर्वेद या सामवेद पारायण हो ही जाता था। इस प्रसंग से दो हजार मंत्रों का पाठ और उस पर कुछ मंत्रों की चर्चा हो जाती थी। अब आयोजकों ने वेद के स्थान पर वेद के शतक से ही काम चलाना प्रारम्भ कर दिया। इसकी बड़ी हानि हुई आज चारों वेद से यज्ञ करने पर भी चार-सौ मन्त्रों से काम चल जाता है, जबकि छोटे वेद से पारायण यज्ञ करने पर भी दो-हजार मन्त्रों का पाठ होता था। यज्ञ के इस अवसर पर ब्रह्मचारियों को वेदपाठ करने का अवसर मिलता था। मूलवेद संहिता की पुस्तकें आयोजक वेदपाठी लेते थे। इन शतकों से मूल संहिता का भी लोप हो गया। अत: यज्ञ, वेद पारायण संहिता से किया जाए तो अधिक उचित हैं यदि एक वर्ष में संभव न हो तो एक-दो वर्ष भी लगाये जा सकते हैं। ऋग्वेद के लिए कोई पांच वर्ष भी लगाये तो भी ठीक इस प्रकार वेद का प्रसंग बना रहता है।

वेद कथा के स्थान पर गीता कथा-कुछ पण्डित अपने यजमान को सन्तुष्ट करने के लिए वेदकथा के स्थान पर गीता की कथा करने लग जाते हैं। कथा गीता, रामायण, महाभारत की हो नहीं सकती या इन कथाओं का करना अनुचित नहीं है, परन्तु ये सब ग्रन्थ वेद का स्थान नहीं ले सकते, वेद के स्थान पर इनको स्थापित करने से हम मनुष्यों को वेद से दूर कर देते हैं। वेदकथा केवल आर्यसमाज करता है। शेष लोगों के पास गीता, भागवत, सत्यनारायण, रामायण, महाभारत सबकुछ है, क्योंकि वे लोग मनुष्य को ईश्वर से दूर रखना चाहते हैं। अत: वेद से मनुष्यों को दूर करते हैं। आर्यसमाज ईश्वर से मनुष्य को जोड़ता है। अत: प्रत्येक मनुष्य के लिए वेद का अधिकार देता है, उसके स्थान पर मनुष्यकृत ग्रन्थों को महत्त्व देकर ईश्वर की आज्ञा का उल्लंघन करते हैं। अत: ऋषि ने वेद के पढ़ने-पढ़ाने, सुनने-सुनाने को परम धर्म कहा था।

हमें कुछ भी करने से पूर्व उसके औचित्य पर विचार अवश्य करना चाहिए। अत: कालिदास ने कहा है-

पुराणमित्येव न साधु सर्वं न चापि काव्यं नवमित्यवद्यम्।
सन्त: परीक्ष्यानतरत् भजन्ते मूढ: पर प्रत्ययनेय बुद्धि:।।

-धर्मवीर

मनुष्यों को चाहिये कि ईश्वर की उत्पन्न की हुई इस सृष्टि में विद्या से कलायन्त्रों को सिद्ध करके अग्नि आदि पदार्थों से अच्छे प्रकार पदार्थों का ग्रहण कर सब सुखों को प्राप्त करें।-**महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद भावार्थ-४.१८।**

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

भौतिक एवं आध्यात्मिक आवेग

-स्वामी विष्वङ्

मानव समाज में दो प्रकार के आवेग दिखाई देते हैं। एक आवेग भौतिक और दूसरा आवेग आध्यात्मिक। सांसारिक जीवन बिताने वालों में भौतिक-आवेग की अधिकता होती है। संसार में जितने भी उत्तम-उत्तम भौतिक (रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द युक्त) पदार्थ हैं, उनके प्रति आवेग होता है, उनको प्राप्त करने का उत्साह होता है, उनके प्रति आकर्षण होता है, उनको प्राप्त करना ही अधिकांश मानवों का ध्येय-लक्ष्य होता है, वास्तव में जीवन में जीना भी उन्हीं पदार्थों को पाने के लिए होता है। इस प्रकार के आवेग वालों को भौतिकवादी कहते हैं। और जो सांसारिक जीवन बिताने वालों से अलग रहते हैं, उनको आध्यात्मिक कहते हैं और वे आध्यात्मिक आवेग से युक्त रहते हैं। आध्यात्मिक आवेग वालों को भौतिक (रूप आदि से युक्त) पदार्थ अच्छे नहीं लगते हैं। उन्हें तो आत्मा, परमात्मा, मन के संस्कार, परलोक, समाधि, मुक्ति, तप, स्वाध्याय, ईश्वर-प्रणिधान आदि विषय अच्छे लगते हैं। वे इन्हीं विषयों को जानने, समझने और आत्मसात् करने में लगे रहते हैं। इस प्रकार के आध्यात्मिक आवेग वालों को आध्यात्मवादी कहते हैं।

जो समुदाय भौतिकवाद को अपने जीवन का ध्येय-लक्ष्य बनाकर जीवन-यापन कर रहा है। वह समुदाय भौतिकवाद को बीच-बीच में भूलकर या गौण कर अध्यात्मवाद की ओर नहीं बढ़ता। वह समुदाय प्रायः अपने ध्येय के प्रति सुनिश्चित होकर उसी में लगा रहता है। जिस किसी भी रीति-पद्धति से वह समुदाय अध्यात्मवाद को बीच-बीच में भूल कर या गौण कर भौतिकवाद की ओर बढ़ता हुआ स्पष्ट देखा जाता है। भौतिकवाद को लेकर चलने वाले प्रायः भौतिकवादी बनकर ही जीवन-यापन करते हैं, परन्तु अध्यात्मवाद को लेकर चलने वाले प्रायः अध्यात्मवादी नहीं बन पाते हैं। वे समय-समय पर भौतिक-आवेग की ओर बढ़ते हुए दिखाई देते हैं। एक ओर भौतिकवादी भौतिक-आवेग से ओत-प्रोत होता हुआ भौतिकता को ही उन्नत करता है, उसके मन में आध्यात्मिकता का आवेग प्रायः उत्पन्न नहीं होता। दूसरी ओर अध्यात्मवादी अध्यात्म आवेग से ओत-प्रोत होता हुआ आध्यात्मिकता को उन्नत करता है, परन्तु उसके मन में भौतिकता का आवेग बीच-बीच में उत्पन्न होता रहता है। कालान्तर में वह अध्यात्मवादी, अध्यात्मवादी न रहकर भौतिकवादी ही बन जाता है। ऐसा होने के कारणों को पकड़ना चाहिए और पकड़कर समझना चाहिए। समझकर उन्हें दूर भी करना चाहिए, तभी अध्यात्म-आवेग को पकड़े रख सकेंगे। जिस प्रकार से भौतिकवादी, भौतिकवादी ही बनकर अपने भौतिक ध्येय को पूरा करता है, उसी प्रकार अध्यात्मवादी भी अध्यात्मवादी ही बने रहते हुए अपने आध्यात्मिक ध्येय को पूरा कर सकता है। ध्येय को प्राप्त करना ही अध्यात्मवादी बने रहने का औचित्य है और उसी में उनकी कृतकृत्यता है।

अध्यात्मवादी आध्यात्मिक-जीवन को बिताते हुए बीच-बीच में भौतिकवाद की ओर आकृष्ट क्यों होता है? क्योंकि उसका जन्म भौतिक परिवेश में हुआ है, माता-पिता आदि सभी पारिवारिक जन भौतिकवादी होते हैं। उसका लालन-पालन भौतिक परिवेश में ही होता है। जन्म से कोई अध्यात्मवादी नहीं होता। हाँ, जन्म से तो भौतिकवादी होता है, क्योंकि परिवेश ही भौतिकवाद का मिलता है, इसलिए जन्म से प्रायः सभी भौतिकवादी होते हैं। अध्यात्मवादी तो बनना पड़ता है। जन्म से ही भौतिकवाद के प्रबल संस्कार अनायास प्राप्त होते हैं और जब तक अध्यात्मवादी नहीं बनता, तब तक भौतिकवाद के ही संस्कार बनते चले जाते हैं। भौतिकवाद के इतने अधिक असीमित से लगने वाले ढेरों संस्कार बने हुए हैं और बीच-बीच में हम नये संस्कार भी बनाते जाते हैं। कोई-कोई विरला होता है, जो अध्यात्मवाद को समझ पाता है, जान पाता है और वह भौतिकवाद के सूक्ष्म-गंभीर दुःखों को जानकर, समझकर अध्यात्मवाद में प्रवेश करता है। उसके अध्यात्मवाद में प्रवेश करने जितने ही आध्यात्मिक-संस्कार होते हैं। वह थोड़े बहुत नये आध्यात्मिक संस्कारों को बनाकर अध्यात्मवाद में आगे बढ़ता रहता है। ऐसी स्थिति में आध्यात्मिक मार्ग में चलते हुए व्यक्ति को बीच-बीच में भौतिकवाद के संस्कार आकृष्ट करते ही हैं। इसीलिए वह अध्यात्मवादी, भौतिकवाद की ओर झुकने लगता है।

जो अध्यात्मवादी ऐसा चाहता है कि वह भौतिकवाद की ओर न झुके, न आकृष्ट हो, न ही मन में इच्छा उत्पन्न हो, तो उसे निरन्तर अध्यात्मवाद का अभ्यास करना होता है। निरन्तर अभ्यास के साथ-साथ आलस्य और प्रमाद को मानो कोसों दूर रखना पड़ता है, क्योंकि आलस्य और प्रमाद के कारण अहंकार आकर मनुष्य को ऐसा पकड़ लेता है कि जैसे किसी के सिर के बालों को पकड़ने से छुड़ाना दुष्कर होता है। अनेक बार अध्यात्मवादी को पता भी नहीं चल पाता है कि कब मुझमें अहंकार आ गया है और मैं कब भौतिकवादी बन गया। इसलिए अध्यात्मवादी को चाहिए कि जब-जब भौतिकवाद की ओर बढ़ने का आवेग

शेष पृष्ठ १७ पर..........

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

कुछ तड़प-कुछ झड़प

-राजेन्द्र जिज्ञासु

जब तक पाप की खेती होती रहेगी-आजकल समाचार-पत्रों तथा टी.वी. में सामूहिक बलात्कार के दु:खद समाचार छाये रहते हैं। चार-चार, पाँच-पाँच वर्ष की बच्चियों के बलात्कार के सम्बन्ध में पढ़-सुन कर कलेजा फटता है। सत्ता पक्ष तथा विपक्ष सबने दुष्कर्म करने वालों को फाँसी-दण्ड देने की माँग की। एक के पश्चात् एक और एक-एक दिन में दो-दो घटनायें सुनने को मिलती हैं, परन्तु अभी तक तो एक भी दुष्ट दानव को फाँसी-दण्ड मिलना तो क्या सुनाया तक नहीं गया। और यदि कभी किसी को सुना भी दिया गया तो लोग कहते हैं फिर भी आसानी से किसी को फाँसी नहीं चढ़ाया जाएगा। किसी की फांसी को शीला दीक्षित लटकवा देगी तो किसी को शिंदे जी के कारण समय मिल सकता है। ये बड़े लोग बहुत व्यस्त हैं। इनके पास दया याचिकाएँ जब आती हैं तो तुरन्त उन्हें देखने का समय कहाँ? नये राष्ट्रपति जी तो लगता है कि शीघ्र न्याय दे देंगे।

जब तक विलासिता के विरुद्ध अभियान नहीं छेड़ा जाता। फ़ैशन प्रतियोगिताओं ने नये-नये नाटक यथा Couple Competitions (दम्पति प्रतियोगिताएँ) आदि बन्द नहीं होतीं। फ़िल्मी संसार के भद्रपुरुष व देवियाँ आलिङ्गन, चुम्बन तथा नग्नता, अश्लीलता का परित्याग नहीं करते पाप की यह खेती लहलहाती रहेगी। एक और बात भी ध्यान में रहे कि जब तक उचित-अनुचित ढंग से धनवान् बनने के चाहवान् ये धनलोलुप वकील ऐसे राक्षसों के केस लड़ते रहेंगे, तब तक यह अनाचार रुक नहीं सकता। हत्यारों का केस लड़ते-लड़ते ये अच्छे वकील, केन्द्रीय मन्त्री तक बन जाते हैं और सरकारें देश-सेवा और सदाचार के पाठ पढ़ाती हैं।

कभी इस देश में महात्मा मुंशीराम जैसे चरित्र के धनी वकील थे जो किसी झूठे, अन्यायी व निर्दयी, लुटेरे, ठग का केस नहीं लेते थे। जब चौधरी चरणसिंह जी नये-नये वकील बने तो आप गाज़ियाबाद के आर्यसमाज के भी मन्त्री थे। उन्हें लोकसेवा तथा आर्यसमाज के प्रचार की धुन लगी रहती थी। किसी ग्राम में एक झगड़ा हो गया। एक पक्ष ने झटपट आकर चौधरी जी को वकील कर लिया। उनके मुन्शी ने फ़ीस ले ली। उनकी फाईल तैयार कर दी। वे लोग फीस देकर अपनी फाईल बनवाकर ग्राम को चले गये।

दूसरे पक्ष को पता चल गया कि इन्होंने चौ. चरणसिंह जी को वकील किया है। पीछे-पीछे वे भी अपनी पंचायत लेकर आ गये। चौधरी जी सारे ग्रामवासियों को पहचानते थे। उन्होंने कहा, ''चौधरी जी आप हमें आर्यसमाज द्वारा ब्रह्मचर्य, सदाचार, नारी सम्मान और सत्कर्मों के पाठ पढ़ाते हैं और धन के लिये एक ग्रामीण महिला से दुर्व्यवहार करने वाले दुष्कर्मी का केस लड़ने को तैयार हो जाते हैं।

चौधरी जी ने उनको ध्यान से सुना। उनको पता चल गया कि इनका कथन सत्य है। उन्होंने तत्काल किसी को भेजकर दूसरे पक्ष वालों को बुलवा लिया। जब वे आये तो उनके प्रतिपक्षी भी वहीं बैठे थे।

चौधरी चरणसिंह जी ने अपने मुन्शी को कहा, इनकी फ़ीस लौटा दो। मुझे पाप की कमाई नहीं चाहिये। मैं देवियों के सतीत्व पर डाका डालने वालों को बचाने के लिये यहाँ नहीं बैठा। यह कहकर उनकी फाईल उठाकर उनकी ओर फैंक दी। सारे कोर्ट में इस घटना की धूम मच गई। सारे क्षेत्र में, ग्राम-ग्राम में यह समाचार फैल गया। सब ओर चौधरी जी के आचरण पर वाह!! होने लगी। अब बलात्कारियों को पीड़ित बताकर राजधानी के वकील प्रेस में वक्तव्य देते हैं। जब तक राजधानी के वकील प्रेस में वक्तव्य देते हैं। जब तक ऐसा होता रहेगा पाप की खेती लहलहाती रहेगी।

ऐसे वकील जो कुछ करते हैं वह कानून सम्मत होगा। ऐसा हम मानते हैं। पतित से पतित व्यक्ति भी वकील कर सकता है। किसी की वकालत करना-कानून के विरुद्ध नहीं। यह भी हम मानते हैं परन्तु भारत के स्वराज्य संग्राम में सेना विद्रोह फैलाने के एक ही दोषी पाये गये संन्यासी महामुनि स्वतन्त्रानन्द को यह घोष स्वर्ण अक्षरों में लिखने योग्य है-

यह आवश्यक नहीं कि जो कानून सम्मत हो वह धर्म सम्मत और पुण्य कर्म भी हो। और यह भी आवश्यक नहीं कि जो धर्म की दृष्टि से पापकर्म हो (यथा सुरापान, मांसाहार, काली कमाई आदि) वे कानून की दृष्टि से भी अपराध हैं।

देश विभाजन से पूर्व एक बार सन् १९०४-१९०५ में लाहौर में डी.ए.वी. वालों के एक कार्यक्रम में ला. लाजपतराय ने स्थूल अक्षरों में यह मोटो लिखवाकर लगवाया था 'हमारा आदर्श Simplicity & Secrifice (सादगी तथा त्याग सेवा)। आज उन्हीं शिक्षा संस्थानों में शिक्षक वर्ग बन-ठनकर आता है। छात्र-छात्राओं को विलासी जीवन का प्रशिक्षण दिया जाता है। सदाचार संयम की धज्जियाँ उड़ाई जाती हैं। अश्लीलता अर्द्धनग्रता के विरुद्ध कुछ कहो तो **मीडिया वाले 'तालिबानी' का ठप्पा लगाने** को दौड़े आते हैं। ये मीडिया वाले भी बहुत विचित्र हैं। जब जी चाहे किसी को अंधविश्वासी बताकर रगड़ दें और कामनाएँ पूरी करवाने वालों की विज्ञापनबाज़ी भी दिन-रात करते हैं।

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

ख्वाजा की दरगाह पर दुर्घटना हुई-मुम्बई से अभिनेता व देवियाँ कामनाएँ पूरी करवाने, अपनी फिल्मों की सफलता की मन्नत मांगने, न्यायालय से मिलने वाले या सुनाये गये दण्ड से बचने की मन्नत मांगने अजमेर आते ही रहते हैं। यह पढ़-सुनकर हमें तो ऐसा लगता है कि अल्लाह ताला ने सकल सृष्टि का संचालन तथा न्याय व्यवस्था मुर्दों के हाथ में सौंप रखा है। मानो कि मुर्दे अल्लाह मियाँ के वायसराय (Viceroy) हैं। वेद कहता है कि यह **विश्व प्रभु के वश में है।** हम सन्ध्या में इस अटल नियम का प्रकाश करते हैं परन्तु सब अवैदिक मत अपने खोटे कर्मों को जानते हुए भी दण्ड से बचने की मन्नतें मांगते हैं।

हमारे पास कुरान का एक भाष्य है। उसमें यह स्पष्ट लिखा है कि कबर पूजा कुफ्र है। यह ईश्वरेतर पूजा है। यह पाप है। डॉ. गुलाम जेलानी लिखते हैं कि कबरों के मुर्दों द्वारा झण्डियाँ हिलाने से आपके पापकर्म क्षमा कर दिये जायेंगे, यह आपका भ्रम है, अंधविश्वास है।

हिन्दु सिखों में भी अंधविश्वास की कोई सीमा नहीं है। सिख मत में भी कर्मफल सिद्धान्त को पूरी-पूरी मान्यता है फिर भी सिखों में '**दुःख भञ्जनी बेरी**' और '**गुरुद्वारा दुःख निवारण**' की महिमा हम सुनते हैं। टी.वी. तथा समाचार-पत्रों में सब दुःख, रोग, कष्ट निवारण करने वाले मन्त्रदाता बाबों की प्रायः विज्ञापन होती ही रहती है। कश्मीर के लाखों हिन्दू पण्डित वर्षों से धक्के खा रहे हैं। परोपकारी प्रधानमन्त्री और दयालु दूरदर्शी पण्डित राष्ट्रपति उनके कष्ट-निवारण नहीं कर पाया। कामनाएँ पूरी करने वाले बारह लिङ्ग भगवानों तथा नदी, नालों और पेड़ों की यात्रायें करने-करवाने वाले भी इस समस्या का समाधान नहीं करवा पाये।

नक्सली समस्या, असम में रक्तपात, कश्मीर में पत्थरबाजी, हिंसा व रक्तपात यथापूर्व देश का लहू पी रहे हैं। इनसे छुटकारा पाने की कामना क्यों नहीं की जाती?

देश की धरती सिकुड़ रही है-करोड़ों घुसपैठियों को वोट बैंक होने के कारण इस देश में बसाया गया है। देश का कंगाली से कचूमर निकल रहा है। विश्व में 'शान्ति का देवता' कहलाने की लालसा से नेहरू जी ने अपनी सेना को कश्मीर में बढ़ने से रोक दिया। कश्मीर का एक बहुत बड़ा भू-भाग पाकिस्तान को............ देश विभाजन के पश्चात् यह पहला भूमि दान था। देश और सिकुड़ गया। देश के अनेक भागों में सैकड़ों वर्ग किलोमीटर भूमि पर केन्द्र अथवा प्रान्तीय सरकारों की नहीं चलती आतंकवादी, उपद्रवी, विदेशियों के कठपुतली तत्त्वों की मनमानी चलती है। यह भी तो धरती का सिकुड़न है। कश्मीर के पंचों सरपंचों का जीवन संकट में है। कितने त्याग-पत्र दे चुके हैं। क्यों? वहाँ पृथकतावादियों की चलती है। मेवात में आयोग बिठाकर जाँच करवालो पता चल जायेगा किस की चलती है। कहते हैं कि वहाँ हुड्डा सरकार की नहीं चलती। यह क्या धरती की सिकुड़न नहीं है?

अब नया समाचार सुनने को मिल रहा है कि सन् १९६२ में सहस्रों वर्ग मील भूमि हड़प लेने वाले चीन के सामने नेहरू जी अक्षम सिद्ध हुए। कामरेड विदेश मन्त्री और नेहरू जी के लम्बे-चौड़े भाषणों से उस समय धरती सिकुड़ गई। अब फिर चीन की सेना बड़ी शान्ति से, सहज भाव से, बड़ी मस्ती से लद्दाख में आगे बढ़ती हुई अपने पाँव जमा चुकी है। सरकार को पता ही न चला। दिग्विजय, राहुल, सोनिया जी सब चुप हैं। बिचारे क्या करें, चुनाव सिर पर हैं। इन्होंने तो नेहरू जी की किसी अच्छी कल्याणकारी नीति को अपनाने की बजाए देश की धरती को सिकोड़ने का धन्धा अपना लिया है। विदेश मन्त्री, रक्षा मन्त्री अपना-अपना प्रवचन सुना रहे हैं। चीन को खरी-खरी सुना सकते हैं और न कुछ कर सकते हैं और जब चीन भारतीय बाजार पर अधिकार जमा लेगा फिर देखना क्या होता है। कांग्रेस के युवा नेता राहुल से क्या कुछ आशा बाँधें?

सत्यार्थप्रकाश विरोधी प्रथम छेड़छाड़-बहुत सारे तथाकथित लीडर तथा लीडरी की महत्त्वाकांक्षा पालने वाले शिक्षित युवक यदा-कदा मेरे से विचित्र जानकारियाँ माँगते रहते हैं। सैद्धान्तिक विचार-विमर्श तो कम करते हैं। ऐसे लोग Views Value (समाचार बनने योग्य) की नई-नई जानकारी चाहते हैं। किसी ने कभी बेजोड़ आर्य मिशनरी मेहता जैमिनी जी के बारे में कुछ नहीं पूछा। किसी ने तपोधन लक्ष्मण जी, पं. मुनीश्वर देव जी, श्री पं. गोपालदेव कल्याणी, स्वामी वेदानन्द की विद्वत्ता व सेवा का प्रसंग सुनाने को नहीं कहा। अखबारी सुर्खी बनने वाली बातें पूछते हैं। किसी को पूछने पर एक बार कहा, "पहले सिख मत पर और सिख इतिहास पर एक सौ पुस्तकें पढ़कर फिर कुछ लिखना।" उसने तो दीवान बद्रीदास जी का नाम सुनकर ही एक भ्रमित करने वाला लेख दे दिया।

सत्यार्थप्रकाश पर एक पुस्तक आनी चाहिये, यह मुझे कहा गया। मैंने कहा, ठीक है दो-चार सौ पुस्तकें अपनों की विरोधियों की पहले पढ़लो। श्रीमान् जी तो सत्यार्थप्रकाश पर चलाये गये अभियोगों की कहानियाँ सुनकर अपने रिसर्च की धौंस जमाना चाहते थे। यह बात फैला दी गई कि पटियाला में सत्यार्थप्रकाश पर प्रतिबन्ध लगाया गया। परोपकारी में लिखना पड़ गया कि यह सर्वथा निराधार प्रचार है। उस समय के कई पत्र-पत्रिकाएँ हम दिखा सकते हैं।

पुनः घूम-फिर कर एक ऐसा प्रश्न भेजा गया। क्या उत्तर देते? टंकारा, उदयपुर ऐसी गतिविधियों में रुचि लें तो समाज का भला हो। ऋषि पर हैदराबाद से वार किया गया। वे मूक दर्शक बने रहे। खुशवन्त सिंह जी ने ओ३म् पर प्रहार किया, हमारे ये दोनों संस्थान मौन रहे। उत्तर देने का काम धर्मवीर जी का है। अच्छा भाई! सब काम धर्मवीर पर छोड़ दो। हमारा ऋषि

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

जीवन के लेखन का कार्य तीन वर्ष में पूरा हो गया। अब प्रूफ़ पढ़ने का काम है। दम मारने का अब समय है। अब सत्यार्थप्रकाश विरोधी पहला आन्दोलन किसने छेड़ा। इस पर परोपकारी में कुछ लिखेंगे। इस पर अब तक सीधा-साधा कभी नहीं लिखा गया।

उस आन्दोलन में भी आर्यसमाज की शानदार जीत हुई। उस समय की पत्र-पत्रिकाएँ भी किसी ने कहीं सम्भाल कर नहीं रखीं। लाहौर गुरुदत्त भवन में सब कुछ था। स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के भण्डार में सबकुछ था। परोपकारिणी सभा के भण्डार में भी बहुत कुछ था। सत्यार्थप्रकाश की एक ऐतिहासिक प्रति (मैंने स्वयं देखी थी) परोपकारिणी सभा के पुस्कालय से कोई तस्कर ले गया। ला. मथुरादास जी की एक उर्दू पुस्तक एक कृपालु ले गया। हमें इसका पूरा ज्ञान है। उसने भी सभा को न लौटाई।

मेरठ के ग्रामीण भोले-भाले ऋषि भक्त धर्मपाल जी के पुरुषार्थ का चमत्कार देखिये कि सत्यार्थप्रकाश विरोधी उस छेड़छाड़, उस आन्दोलन के समाचारों वाले कुछ अङ्क हमें मिल गये हैं। कुछ सामग्री सभा के पास सुरक्षित करवा दी है। और भेंट कर देंगे। आज तो इतना ही लिखना पर्याप्त है कि यह आन्दोलन बीसवीं शताब्दी से पहले का है।

उसके बारे में एक ऐतिहासिक महत्त्व का तथ्य यह है कि ऋषि दयानन्द के आर्यसमाज के एक घोर विरोधी ने भी तब सत्यार्थप्रकाश के विरोधियों की खबर ली थी। उसने क्या लिखा? यह सारी सामग्री अकोला निवासी सुयोग्य आर्यवीर राहुल के सहयोग से हम खोज चुके हैं। राहुल अस्वस्थ थे फिर भी परोपकारी परिवार के इस लाल ने यह करणीय कार्य कर दिया। इस इतिहास की पूरी जानकारी हम शीघ्र आर्य जाति को सप्रमाण देंगे।

पूज्य उपाध्याय जी पर कृपा हो गई-एक बार पं. रामचन्द्र जी (स्वामी सर्वानन्द जी महाराज) को पंजाब सभा ने कहीं प्रचारार्थ भेजा। वहाँ आर्यसमाज नहीं था। स्वामी जी नये-नये प्रचार क्षेत्र में उतरे थे। समर्पण भाव था, त्याग था, जवानी थी और अथाह जोश था। पण्डित जी को यह देखकर बड़ा दु:ख हुआ कि यहाँ आर्यसमाज ने कभी प्रचार किया ही नहीं। यहाँ तो घोर अंधकार है। आपने जोश में आकर एक लेख में लिख दिया कि आर्यसमाज को रगड़कर रख दिया। महाशय कृष्ण जी ने प्रकाश में लेख तो छाप दिया परन्तु एक मार्मिक टिप्पणी देकर उसमें लिखा था कि आर्यसमाज के बड़ों ने तन, मन, धन और लहू तक देकर ऋषि मिशन के लिए बहुत कुछ किया है। अभी बहुत कुछ करना शेष है। जब तक अंधेरा है, हम चैन से नहीं बैठेंगे। युवा विद्वान् को पं. गुरुदत्त जी, पं. लेखराम जी, महात्मा नित्यानन्द जी, पं. गणपति शर्मा जी और स्वामी श्रद्धानन्द का इतिहास भूलना नहीं चाहिए। पं. रामचन्द्र जी की टिप्पणी पढ़कर आँखें खुल गई। फिर सारे जीवन में स्वामी सर्वानन्द जी ने १५-२० ही लेख लिखे होंगे।

हम ऋषि जीवन के लेखन कार्य से अभी कल ही निपटे हैं। पता चला कि एक महात्मा ने श्रद्धास्पद उपाध्याय जी पर कृपा कर दी है। उपाध्याय जी भी अल्पज्ञ जीव थे। उनकी भूल कोई है भी तो उस पर विचार किया जा सकता है और भूल हो ही कुछ न और बिना बात के बतंगड़ बनाकर किसी विभूति की सतत साधना पर पानी फेर देना यह एक चिन्ताजनक नीति है। जिस व्यक्ति ने अब तक कुछ स्मरणीय ठोस कार्य किया ही न हो वह सत्तर वर्ष निरन्तर एक-एक श्वास ऋषि मिशन को अर्पित करने वाले त्यागी, तपस्वी पूज्य महापुरुष पर व्यर्थ की टीका-टिप्पणी करें यह अशोभनीय कर्म है।

मांसाहार का पक्षपोषक उपाध्याय जी को बताना, वैसा ही है जैसा विद्यानन्द विदेह ने उन्हें नास्तिक लिखकर अपनी भड़ास निकाली थी। उपाध्याय जी तथा उनके सुपुत्र डॉ. सत्यप्रकाश जी ने मांस भक्षण के खण्डन व शाकाहार के मण्डन में जैसी लेखनी चलाई है, वैसी युक्तियाँ, वैसे तर्क गत कई शताब्दियों में कोई भी नहीं दे सका। विदेशी भी पिता-पुत्र के एतद्विषयक चिन्तन का लोहा मानते हैं। हम उपाध्याय जी की एक अनूठी युक्ति देकर लेखनी को आज विराम देंगे।

अपनी प्रसिद्ध पुस्तक Vedic Culture में उपाध्याय जी लिखते हैं-"Wholesale Slaughter of animals has made us callous hearted" अर्थात् पशुओं के थोक नरसंहार ने मनुष्य को पाषाण हृदय बना डाला है। सूर्योदय से पूर्व बूचड़खानों में लाखों पशु-पक्षियों के वध की चीत्कार आकाश में व्याप्त हो जाती है फिर विश्व शान्ति कैसे हो? यह तर्क क्या किसी ने कभी दिया? **-शेष अगले अंकों में।**

वेद सदन, अबोहर।

सूचना

परोपकारी पत्रिका अपने लेख, कविताओं, प्रतिक्रियाओं, पाठकों के विचार, विज्ञप्ति के लिए आप लेखक-महानुभावों से अनुग्रहित होती रही है। आप सभी लेखक-महानुभावों से निवेदन है कि अपने लेख, प्रतिक्रिया, विचार, सुझाव, सूचना इत्यादि कुछ भी सामग्री, जो प्रकाशनार्थ भेजी जा रही है उसे मुद्रित कराकर, उसका प्रूफ-संशोधन कर ही भेजने की कृपा करें। जो महानुभाव अपनी प्रतिक्रिया पोस्टकार्ड में भेजना चाहते हैं, वे स्पष्ट, सुपाठ्य लिपि में लिखकर अथवा लिखवाकर ही भेजें। **-सम्पादक**

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

जिज्ञासा समाधान

जिज्ञासा–आदरणीय आचार्य जी, सादर नमस्ते। आपने 'परोपकारी' के माध्यम से मेरे प्रश्नों का समाधान कर बड़ा उपकार किया है। तदर्थ धन्यवाद.....।

इधर बाद में आपके नाम एक पत्र भेजकर मैंने आपसे जानना चाहा था कि सृष्टिकाल को जानने में विशेष अवसरों पर जो ऋत्विग् वरण होता है या होता आ रहा है–वह होना चाहिये या नहीं? और उसे प्रमाण मानकर सृष्टिकाल को भी मानना चाहिये कि नहीं?

संकल्प में ब्रह्मदिन के द्वितीय प्रहरार्ध, मन्वन्तर, कल्प, युग और मास तिथि आदि का उच्चारण कराया जाता है और इस उच्चारण करवाने में जो वर्तमान होता है–उसे ही कहा जाता है अर्थात् चार प्रहर में ब्रह्मा के द्वितीय प्रहर के आधा, १४ मन्वन्तरों में वैवस्वत मन्वन्तर युगों में कलियुग इत्यादि..। साथ ही कुछ लोग संकल्प करते समय श्वेत वाराह कल्पे भी कहलाते हैं। यह मुझे आपसे जानना था कि सृष्टि में कल्प कितने होते हैं? और श्वेत वराह कल्प क्या है?

कृपया, संकल्प के विषय में मेरी जो जिज्ञासा है, उसे समाधान करने की कृपा करें, स्वामी दयानन्द जी सरस्वती ने तो संस्कार विधि में केवल इतना ही लिखा यजमानों की ''ओमावसो: सदने सीद, ऋत्विगुक्ति: ओं सीदामि, यजमानोक्ति:–अहमद्योक्तकर्मकरणाय भवन्तं वृणे, वृतोऽस्मि''। किन्तु बहुत लोग वैवस्त मन्वन्तरे, कलि प्रथम चरणे, श्वेत वाराह कल्प–आर्यावर्तैकदेशे–तिथौ–मासे आदि यजमान से बोलवाते हैं। **१.** क्या संस्कार विधि में जितना लिखा है, उतना ही उच्चारण करवाना चाहिये या अन्य भी। तब हमें जिज्ञासा होती है कि कल्प कितने होते हैं जो वर्तमान में श्वेत वाराह कल्प के नाम से चल रहे हैं?

कृपया मेरी जिज्ञासा–समाधान करके अनुगृहीत करें। **–पं. विभुमित्र शास्त्री, 'विद्यामार्तण्ड', सरस्वती सदन, ग्रा. व पो.–चोरसुआ, पावापुरी, जिला–नालन्दा।**

पत्र के माध्यम से आपने संकल्प पाठ के विषय में कई प्रश्न किये हैं। उनका उत्तर क्रमश: संक्षेप से लिखते हैं।

समाधान–

प्रश्न–..........ऋत्विग् वरण होता है या होता आ रहा है, वह होना चाहिए या नहीं?

उत्तर–होना चाहिए क्योंकि यह शास्त्र सम्मत है।

प्रश्न–उसे प्रमाण मानकर सृष्टि काल को भी मानना चाहिए कि नहीं?

उत्तर–संकल्प पाठ को प्रमाण मानकर सृष्टिकाल को मानना चाहिए। क्योंकि इसे महर्षि दयानन्द जी ने भी माना है और परम्परा से चला आ रहा है।

प्रश्न–संकल्प पाठ कराते समय 'श्वेत वराह कल्पे' भी कहवाते हैं। ....सृष्टि में कितने कल्प हैं? श्वेत वराह कल्प करवाना ठीक है कि नहीं? श्वेत वराह कल्प क्या है?

उत्तर–सम्पूर्ण सृष्टि को ही कल्प कहते हैं, इसलिए सृष्टि में कितने कल्प होते हैं, यह कहना तो बनेगा नहीं। पौराणिकों ने ३० कल्पों के नामों की कल्पना कर रखी। यह कल्पना कैसे की है यह ज्ञात नहीं है। जैसे ३० दिनों का एक महीना है, उस महीने के दो पक्ष हैं और उसमें सात दिनों के नाम हैं, वे सात दिन बार–बार आते रहते हैं। उसी प्रकार पौराणिकों ने ३० कल्पों (सृष्टियों) का एक महीना माना है, उनके दो पक्ष माने हैं और ३० कल्पों के नाम भी पृथक्–पृथक् रखे हैं।

वे नाम हैं–**१.** श्वेत वराह कल्प, **२.** नील लोहित कल्प, **३.** वामदेव कल्प **४.** रथन्तर कल्प, **५.** रौरव कल्प, **६.** प्राण कल्प, **७.** बृहत् कल्प, **८.** कन्दर्प कल्प, **९.** सत्य कल्प, **१०.** ईशान कल्प, **११.** व्यान कल्प, **१२.** सारस्वत कल्प, **१३.** उदान कल्प, **१४.** गारुड़ कल्प, **१५.** कौर्म कल्प (पूर्णिमा), **१६.** नारसिंह कल्प, **१७.** समान कल्प, **१८.** आग्नेय कल्प, **१९.** सोमकल्प, **२०.** मानव कल्प, **२१.** पुमान् कल्प, **२२.** वैकुण्ठ कल्प, **२३.** लक्ष्मी कल्प, **२४.** सावित्री कल्प, **२५.** घोर कल्प, **२६.** वराह कल्प, **२७.** वैराज कल्प, **२८.** गौरी कल्प, **२९.** माहेश्वर कल्प, **३०.** पितृकल्प (अमावस्या)।

श्वेत वराह कल्प कराना ठीक प्रतीत नहीं होता। पौराणिकों के अनुसार श्वेत वराह कल्प एक सृष्टि का नाम है।

स्वामी दयानन्द जी ने जो संस्कार विधि में 'आवसो: सदने सीद' आदि लिखा है, उसको करते हुए संकल्प पाठ करना उचित है, उसको करना चाहिए। इस विषय में कल्प विषयक जानकारी मान्य आचार्य आनन्द प्रकाश जी गुरुकुल अलियाबाद से प्राप्त हुई। इसके लिए आचार्य श्री का धन्यवाद। कल्प के लिए वाचस्पत्यम् शब्द कोष भी देखें।

–सोमदेव, ऋषि उद्यान, अजमेर।

मनुष्यों को चाहिये कि विद्या से परस्पर पदार्थों का मेल और सेवन कर रोगरहित शरीर तथा आत्मा की रक्षा करके सुखी रहना चाहिये।–
महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद भावार्थ–४.१३।

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

वास्तविक धर्म और उसका स्वरूप

-प्रा. सत्यदेव निगमालंकार 'चतुर्वेदी'

भारतीय जनमानस में धर्म का सर्वोपरि महत्त्व है। **धरति लोकान् ध्रियते पुण्यात्मभिरिति वा**[१], **ध्रियते लोकोऽनेन, धरति लोकम् वा** कहकर कोशकारों ने धर्म को लोक का आधार बताया है। यह लोक को धारण करता है।[२] जहाँ लोक में धर्म के विभिन्न रूप लोगों ने माने हैं, वहीं कर्त्तव्य, जाति, सम्प्रदाय आदि के प्रचलित आचार का पालन, कानून, प्रचलन, दस्तूर, प्रथा, अध्यादेश, अनुविधि, धार्मिक या नैतिक गुण, भलाई, नेकी, अच्छे काम, कर्त्तव्यशास्त्र में विहित आचरण, अधिकार, न्याय, औचित्य या न्यायसाम्य, निष्पक्षता, पवित्रता, शालीनता, नैतिकता, नीतिशास्त्र, प्रकृति, स्वभाव, चरित्र, मूलगुण, विशेषता, लाक्षणिक गुण, रीति, समरूपता, समानता, यज्ञ, सत्संग, भक्ति, धार्मिक भावमग्नता, प्रणाली, रीति, उपनिषद्, ज्येष्ठ पाण्डव युधिष्ठिर, मृत्यु का देवता यम अर्थों में धर्म शब्द का प्रयोग दिखाया है।[३] वेदों और स्मृतियों में कहा हुआ जो आचरण है, वही सर्वश्रेष्ठ धर्म है। इसलिये आत्मोन्नति चाहने वाले द्विज को चाहिये कि वह इस श्रेष्ठाचरण में सदा प्रयत्नशील रहे।[४] जो धर्माचरण से रहित है, वह वेद प्रतिपादित धर्मजन्य सुखरूप फल को प्राप्त नहीं हो सकता और जो विद्या पढ़कर धर्माचरण करता है, वही सम्पूर्ण सुख को प्राप्त होता है।[५] धर्माचरण से ही धर्म की प्राप्ति एवं अभिवृद्धि देखकर मुनियों ने सब तपस्याओं का श्रेष्ठ मूलाधार धर्माचरण को ही स्वीकार किया है।[६] सम्पूर्ण वेद अर्थात् ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद तथा उन वेदों के पारंगत-वेदज्ञ विद्वानों के रचे हुए स्मृति ग्रन्थ अर्थात् वेदानुकूल धर्मशास्त्र और श्रेष्ठ गुणों से सम्पन्न स्वभाव तथा श्रेष्ठ सत्याचरण करने वाले पुरुषों का सदाचरण एवं ऐसे ही श्रेष्ठ सदाचरण वाले व्यक्तियों की अपनी आत्मा की सन्तुष्टि और प्रसन्नता अर्थात् जिस काम के करने में आत्मा में भय, शंका, लज्जा उत्पन्न न हो, अपितु सात्त्विक सन्तुष्टि और प्रसन्नता का अनुभव हो, ये चार धर्म के मूल स्रोत-उत्पत्तिस्थान या आधार हैं।[७] जो मनुष्य वेदोक्त धर्म और जो वेद से अविरुद्ध स्मृति द्वारा प्रोक्त धर्म का अनुष्ठान करता है, वह इस लोक में कीर्ति और शरीरोपरान्त सर्वोत्तम सुख को प्राप्त होता है।[८] धर्म के चार आधार हैं-वेद, स्मृति, सत्पुरुषों का आचरण तथा अपने आत्मा के ज्ञान से अविरुद्ध प्रियाचरण, इन्हीं से धर्म लक्षित होता है।[९] जो पुरुष द्रव्यों के लोभ और काम अर्थात विषय सेवा में फंसा हुआ नहीं होता, उसी को धर्म का ज्ञान होता है। जो धर्म को जानने की इच्छा करे उनके लिये वेद ही परम प्रमाण हैं।[१०] यह निश्चित है कि प्राणियों को सभी प्रकार के दु:ख अधर्म से ही मिलते हैं और अक्षय सुख अर्थात् मोक्ष की अवधि तक रहने वाले सुखों की प्राप्ति केवल धर्म से ही सम्भव है। इसलिये धर्माचरण अवश्य करना चाहिये।[११] महर्षि मनु ने वेद को ही धर्म का मूल माना। धर्म की जिज्ञासा रखने वालों के लिये वेद परम प्रमाण हैं, उसी से धर्म-अधर्म का निश्चय करना चाहिये।[१२] यज्ञ, स्वाध्याय, दान, तप, सत्याचरण, क्षमा, दम अर्थात् इन्द्रियों का संयम तथा लोभ का परित्याग ये धर्म के आठ मार्ग हैं।[१३] धर्म के तीन लक्षण बताये गये हैं। वेदों में कही गयी बात धर्म का पहला लक्षण है। धर्मशास्त्रों द्वारा प्रतिपादित विचार धर्म का दूसरा लक्षण है तथा सज्जनों का आचार-व्यवहार धर्म का तीसरा लक्षण है।[१४] यदि धर्म का नाश किया जाता है तो नष्ट हुआ धर्म हमारा भी नाश कर देता है। यदि धर्म की रक्षा की जाती है, तो धर्म हमारी भी रक्षा करता है।[१५]

धर्म के दश गुण बताते हुए उसके शरीर की परिकल्पना की गयी है। यश, सत्य, इन्द्रियनिग्रह, शौच, सरल व्यवहार, लज्जा, अचंचलता, दान, तप और ब्रह्मचर्य-ये दस गुण धर्म के

---

१. हलायुधकोश:, हिन्दी समिति सूचना विभाग, उत्तरप्रदेश, लखनऊ।
२. सं. हिन्दीकोश, वामनशिवराम आप्टे, पृ.४८९, प्रकाशक, भारतीय विद्या प्रकाशन, नई दिल्ली सं. १९९९
३. सं. हिन्दीकोश, वामनशिवराम आप्टे, पृ.४८९, प्रकाशक, भारतीय विद्या प्रकाशन, नई दिल्ली सं. १९९९
४. आचार: परमो धर्म: श्रुत्युक्त: स्मार्त एव च।
तस्मादस्मिन्सदा युक्तो नित्यं स्यादात्मवाद्विज:। मनु. १.१०८
५. आचाराद्विच्युतो विप्रो न वेदफलमश्नुते।
आचारेण तु संयुक्त: सम्पूर्णफलभाग्भवेत्॥ मनु. १.१०९
६. एवमाचारतो दृष्ट्वा धर्मस्य मुनयो गतिम्।
सर्वस्य तपसो मूलमाचारं जगृहु: परम्॥ मनु. १.११०
७. वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम्।
आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च॥ मनु.२.६
८. श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममनुतिष्ठिन्हि मानव:।
इह कीर्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमं सुखम्॥ मनु. १.१२८
९. वेद: स्मृति: सदाचार: स्वस्य च प्रियमात्मन:।
एतच्चतुर्विधं प्राहु: साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्॥ मनु. २.१२
१०. महर्षि दयानन्द सरस्वती, सत्यार्थप्रकाश, दशम समुल्लास।
११. अधर्मप्रभवं चैव दु:खयोगं शरीरिणाम्॥
धर्मार्थप्रभवं चैव सुखसंयोगमक्षयम्॥ मनु. ६.६४
१२. वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम्।
आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च॥ मनु. २.६
१३. इज्याध्ययनदानानि तप: सत्यं क्षमा दम:।
अलोभ इति मार्गोऽयं धर्मस्याष्टविध: स्मृत:।। महा.वनपर्व २.७५।
१४. वेदोक्त: परमो धर्म: धर्मशास्त्रेषु चापर:।
शिष्टाचारश्च शिष्टानां त्रिविधं धर्मलक्षणम्॥ महा. वनपर्व २०७/८३
१५. धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षित:। महा. वनपर्व ३१३/१२८
१६. यश: सत्यं दम: शौचमार्जवं ह्रीरचापलम्।
दानं तपो ब्रह्मचर्यमित्येतास्तनवो मम॥ महा. वनपर्व ३१४/७
१७. यतो धर्मस्ततो जय:। महा. उद्योगपर्व ३९/९
१८. न जातु कामान्न भयान्न लोभाद् धर्मं जह्याज्जीवितस्यापि हेतो:।
नित्यो धर्म: सुखदु:खे त्वनित्ये जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्य:।

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

शरीर हैं।[१६] जिस पक्ष में धर्म होता है, उसी पक्ष की विजय होती है।[१७] किसी कामना से, भय से, लोभ से तथा जीवन के लिये भी धर्म नहीं छोड़ना चाहिये। धर्म नित्य है, किन्तु सुख-दु:ख अनित्य हैं। आत्मा नित्य है, किन्तु इसका शरीर अनित्य है। अनित्य वस्तुओं को छोड़कर नित्य तत्त्व को पकड़ना चाहिये, और सन्तुष्ट रहना चाहिये, सन्तोष सबसे बड़ा लाभ है।[१८]

धर्म ही प्रजा का धारण, पालन-पोषण, रक्षा आदि करता है। धारण करने के कारण ही उसे धर्म कहा जाता है। जिस काम से प्राणियों की रक्षा और भलाई होती है, वही काम धर्मयुक्त होता है।[१९] धर्म के बढ़ने पर सभी प्राणियों का भला होता है। धर्म के घटने पर सभी प्राणियों का कल्याण कम हो जाता है। अत: धर्म को नष्ट नहीं करना चाहिये।[२०] जो व्यक्ति सभी प्राणियों पर दया करता है, सबके साथ सरल व्यवहार करता है और सभी प्राणियों में अपने आपको ही अनुभव करता है, उसे धर्म का फल मिलता है।[२१] क्षमाशील, जितेन्द्रिय, क्रोध को वश में रखने वाले, धार्मिक, हिंसा न करने वाले और धर्मपरायण व्यक्ति को धर्म का फल मिलता है।[२२] मनुष्य को अकेले ही धर्माचरण करते रहना चाहिये, उसे धर्म का दिखावा नहीं करना चाहिये। जो लोग धर्म को जीविका का साधन बनाते हैं, वे धर्म के व्यापारी हैं।[२३] इसलिये दुर्लभ मनुष्य-जन्म पाकर सदा धर्म का पालन करना चाहिये क्योंकि धर्म से प्रेम करने वालों के लिये संसार में कोई भी वस्तु दुर्लभ नहीं होती।[२४] रिश्तेदार मृत शरीर को लकड़ी और मिट्टी के ढेले की तरह छोड़कर और मुंह मोड़कर चलते बनते हैं। तब धर्म ही मृत मनुष्य के शरीर पर नजर रख कर मुस्कुराता रहता है। इसलिये धर्म को सहायक मानकर धर्म पालन करते रहना चाहिये। क्योंकि धर्म की सहायता से मनुष्य आपत्तियों को पार कर लेता है।[२६] अन्त में महर्षि वेदव्यास संसार के पुरुषों को समझाते हुए कहते हैं कि हे संसार के मनुष्यों! मैं भुजा उठाकर चिल्ला रहा हूँ, पर मेरी बात तुम लोग नहीं सुन रहे हो, धर्म से ही धन मिलता है और कामनायें पूरी होती है, फिर भी तुम उस धर्म का पालन क्यों नहीं करते?[२७]

वस्तुत: धर्म का मूल ईश्वर है। आज विश्व में मुस्लिम, ईसाई, बौद्ध, यहूदी और जरदुश्ती मत-मतान्तर फैले हुए हैं। इन सब मत-मतान्तरों में कोई भी मतावलम्बी ऐसा नहीं है जो सत्य बोलना आदि धर्म के मूल हैं, उन्हें स्वीकार न करता हो। जैन और बौद्ध मत पूर्णत: अहिंसाश्रित हैं। अहिंसा भी धर्म का एक अंग है। **धृञ् धारणे**[२८] धातु से धर्म बना है। धारण करना अर्थात् पदार्थ के धारक को वैयाकरणों ने धर्म कहा है। जिसका अभिप्राय है कि जिन तत्त्वों से पदार्थ का अस्तित्व है वही तत्त्व उस पदार्थ का धर्म है अर्थात् जिन तत्त्वों के नष्ट हो जाने पर पदार्थ भी नष्ट हो जाये और तत्त्वों के बचे रहने पर पदार्थ बचा रहे, वे तत्त्व उस पदार्थ के धर्म हुए। इसका अर्थ यह निकला कि बिना अपने तत्त्व=धर्म के पदार्थ का भी अस्तित्व नहीं है। जब हम अर्थ का विस्तार करते हैं तब ज्ञात होता है कि वस्तु का जो स्वभाव है, वही उसका धर्म है।[२९] जैसे अग्नि का स्वभाव उष्णता है, यदि अग्नि में से उष्णता को निकाल दिया जाये तो अग्नि, अग्नि न रहकर राख हो जायेगी। अत: उष्णता अग्नि का धर्म हुआ।[३०] जिस प्रकार पदार्थ का अपना एक धर्म होता है, उसी प्रकार मनुष्य के भी उपरोक्त धर्म हैं। धर्म ही मनुष्य का मूल तत्त्व है। धर्म के नष्ट हो जाने पर मनुष्य, मनुष्य नहीं रहता, वह पशुतुल्य हो जाता है।[३१]

इसी प्रकार हम देखते हैं कि धर्म ही जीवन का समग्र दृष्टि है। संसार में पारिवारिक, व्यक्तिगत, सामाजिक, राजनैतिक, शैक्षणिक, साहित्यिक, आध्यात्मिक इत्यादि विविध प्रकार के कर्मों को जब हम वेद तथा स्मृति प्रतिपादित उपरोक्त लक्षणों के अनुसार आचरण करते हैं, तब वह धर्म की कसौटी में आता है। वस्तुत: यह जीवन एक संग्राम है, इस संग्राम में सत्य आदि अहिंसा व्रतों का तथा धर्माचरण का पालन करना मनुष्य को उच्च स्थिति तक पहुँचा देता है। जिस प्रकार सूर्य के उदय होने पर अन्धकार स्वत: पलायन कर जाता है, उसी प्रकार धर्म का आचरण करने पर मनुष्य का दु:ख, दारिद्र्य, चिन्ता, विषाद, भय, शोक, असन्तोष, अतृप्ति सभी के सभी स्वयं विनष्ट होते चले जाते हैं। अत: मानवों को धर्म का आचरण निश्चित रूप से प्रत्येक परिस्थिति में करना चाहिये।

-गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार।

त्यक्त्वा नित्यं प्रतितिष्ठस्व नित्ये संतुष्य त्वं तोषपरो हि लाभ:॥
महा. उद्योग ४०.१२, ४०.१३, स्वर्ग ५.६३

१९. धारणाद् धर्ममित्याहुर्धर्मो धारयते प्रजा:।
यत् स्याद् धारणसंयुक्तं स धर्म इति निश्चय:। महा.कर्ण. ६९/५८

२०. धर्मे वर्धति वर्धन्ति सर्वभूतानि सर्वदा।
तस्मिन् ह्रसति ह्रीयन्ते तस्माद् धर्मं न लोपयेत्॥ महा. शान्ति.९०/१७

२१. सर्वभूतानुकम्पी य: सर्वभूतार्जवव्रत:।
सर्वभूतात्मभूतश्च स वै धर्मेण युज्यते॥ महा.अनु. १४२/२८

२२. क्षान्तो दान्तो जितक्रोधो धर्मभूतो विहिंसक:।
धर्मे रतमना नित्यं नरो धर्मेण युज्यते॥ महा. अनु. १४२/३२

२३. एक एव चरेद् धर्मं न धर्मध्वजिको भवेत्।
धर्मवाणिजका ह्येते ये धर्ममुपभुञ्जते॥ महा.अनु.१६२/६१

२४. तस्माद् धर्म: सदा कार्यो मानुष्यं प्राप्यं दुर्लभम्॥
न हि धर्मानुरक्तानां लोके किञ्चन दुर्लभम्।॥ महाआश्व.९२दा.पा.अ.१०॥

२५. मृतं शरीरमुत्सृज्य काष्ठलोष्ठसमं क्षितौ।
विमुखा बान्धवा यान्ति धर्मस्तमनुवर्तते॥ महा.आश्व.९२दा.पा.अ.१०॥

२६. अनागतानि कार्याणि कर्तुं गणयते मन:।
शारीरकं समुद्दिश्य स्मयते नूनमन्तक:॥
तस्माद् धर्मसहायस्तु धर्मं संचिनुयात् सदा।
धर्मेण हि सहायेन तमस्तरति दुस्तरम्॥ महा.आश्व.दा.पा.अ.१०॥

२७. ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष न च कश्चिच्छृणोति मे।
धर्मादर्थश्च कामश्च स किमर्थं न सेव्यते॥ महा. स्वर्ग ०५/६२

२८. पाणिनीय धातुपाठ: भ्वादि ०६२९

२९. वस्तुस्वभावो धर्म:।

३०. धर्म तो वस्तु का स्वभाव ही कूं कहिये। लोक में जेते पदार्थ हैं, तितने अपने स्वभाव कूं कदाचित् नहीं छोड़े हैं, जो स्वभाव का नाश हो जाये, तो वस्तु का अभाव होय। सुमन्तभद्र।

३१. धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीना: पशुभि: समाना:॥ नीतिशतक, भर्तृहरि

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

हमारी ओडिशा यात्रा

-मुमुक्षु मुनि

गत दिनों अपने कुछ साथियों के साथ मैंने ओडिशा की यात्रा की। अजमेर से रेल द्वारा यात्रा शुरु हुई। यात्रा का पहला पड़ाव मध्यप्रदेश के छिन्दवाड़ा जिले में था। यहाँ के आदिवासी संग्रहालय ने मुझे सर्वाधिक प्रभावित किया जिसमें उस क्षेत्र के आदिवासियों के जीवन-शैली, रहन-सहन को चित्रावली के माध्यम से बताया गया था। उपयोग की वस्तुओं की झांकी, उसके बारे में दीवारों पर सूचनाएँ अंकित थी। मिट्टी के बर्तनों व वनस्पतियों पर उनके द्वारा की गई हस्तकला देखने को मिली। बताया गया कि वहाँ से कुछ दूरी पर एक ''पाताल कोट'' नामक स्थान है, यह इलाका समुद्रतल से भी २० से ४० फीट की गहराई पर स्थित है। यह क्षेत्र लगभग ६० वर्ग कि.मी. में फैला है जिनमें अगरिया, आन्ध, मैना, भारिया, भूमिया, पालिहा, पांडो, भील आदि लगभग १० से १५ जातियाँ निवास करती हैं। उनमें अभी भी कुछ जनजातियों के लोग नंगे ही रहते हैं। मुख्यतया जंगली पशुओं का शिकार करना उनका पेशा है कुछ लोग उपलब्ध गोंद, महुआ व अन्य वस्तुओं को बाजार में बेचकर जीविका चलाते हैं।

छिन्दवाड़ा स्थित मोक्षधाम भी हमारे लिए दर्शनीय स्थल था क्योंकि अभी-अभी यहाँ भुवन जी आर्य के द्वारा वैदिक अन्त्येष्टि वेदी का निर्माण कराया गया था। निर्माण पूरा होने पर श्री भुवन जी ने कहा था कि कोई भाग्यवान इसका उद्‌घाटन करेगा और संयोग से १५ दिन पश्चात् हृदयाघात से उनका ही देहावसान होने पर उस वेदी का उद्‌घाटन उनसे ही हुआ। वहाँ से निकल श्री भुवन जी आर्य के घर जाकर उनके परिवार वालों से मिले। उस परिवार में दोनों समय यज्ञ होता है। स्वर्गीय भुवन जी ने कई ब्रह्मचारियों को गुरुकुलीय शिक्षा के लिए अपने खर्च पर गुरुकुल भेजा था। अगले दिन २५ कि.मी. दूर एक गाँव ''सालेछिन्दी'' पहुँचे। गाँव में प्रवेश से पूर्व आचार्य सत्यप्रिय जी के खेत पर गन्ने एवं गुड़ का रसास्वादन किया। गाँव में जाकर पारिवारिक यज्ञ, नामकरण संस्कार एवं प्रवचन का कार्यक्रम चला। मध्याह्न भोजन पश्चात् गाँव के लोगों से भेंट व वैदिक साहित्य वितरण किया। पुन: वहाँ से पुरी (ओडिशा) के लिए प्रस्थान किया। पुरी पहुँचकर प्राचीन ऐतिहासिक कोणार्क मन्दिर देखा। मन्दिर के द्वार पर दो सिंह हाथियों को दबाये हुए थे मन्दिर को सूर्य देवता का रथ का आकार दिया गया था। रथ के चौदह पहिए और सात घोड़े जुते हुए थे। वहाँ से आगे श्रीकान्त जी के यहाँ राउतपड़ा पहुँचे, जहाँ बड़े ही आत्मीयता, स्नेह सम्मान के साथ ठहराया गया। यहाँ से प्रचार प्रारम्भ हुआ। यज्ञस्थल पर वेदी सुसज्जित, सत्संग पंडाल के सामने ही लहराता हुआ ''ओ३म्'' ध्वज देखकर मन बड़ा ही प्रसन्न हुआ। मुख्य आयोजकों ने हमारे पग प्रक्षालन किया जो कि यहाँ की परम्परा है, साथ ही श्रीफल व वस्त्र प्रदान करके एवं तिलक करके हमारा यज्ञ कार्य हेतु वरण किया गया, यज्ञ के पश्चात् गर्म पानी का स्रोत देखा जिसमें चावल पका सकते हैं। वहाँ से आर्यसमाज जारड़ा (जिला गंजाम) पहुँचे, जहाँ हम चारों के प्रवचन हुए। लोगों की उपस्थिति अच्छी रही। वहाँ से १५ कि.मी. दूर खारिया गाँव जो कि पूरा का पूरा गाँव ही आर्यसमाजी था वहाँ जाना हुआ। वहाँ से आगे ''मांगूरा पड़ा'' गाँव में पहुँचे, हमारे कर्मचारी भीमपात्र वहीं के है। यहाँ से उड़िया संस्कृति का साक्षात्कार हुआ। एक-एक पड़ाव में लगभग २० गाँव के लोगों से सम्पर्क किया। अपने सिद्धान्तों को उन तक पहुँचाने का प्रयास किया। सभी गाँव देखने में लगभग एक जैसे बीच में एक चौड़ा गलियारा जिसके दोनों ओर लगभग एक जैसे दूर तक पंक्तिबद्ध मकान। सभी घरों की चौड़ाई मात्र ५ या ६ फीट और लम्बाई ४० से ६० फीट। बीच में पार्टीशन करके चार या पाँच कमरे थे। बिल्कुल रेलगाड़ी के डिब्बे जैसा। गलियारे में धान का ढेर जिसे मिट्टी लेपकर ढक दिया था। वहाँ के लोग अत्यन्त सीधे-सादे थे।

शुद्ध प्राचीन भारतीय पहनावा। पुरुषों के लुंगी और कंधे पर अंगोछा। परदेश जाने पर ही कुर्ते का प्रयोग। कुछेक विद्यार्थी व दूसरे प्रान्तों में नौकरी करने वाले ही पैन्ट में मिलेंगे। जीन्स, स्कर्ट दूर तक नहीं। महिलाएँ अधिकतर ओडिया पहनावे की साड़ी में। कुछ नवयुवतियाँ ही उल्टे पल्ले की साड़ी में। किन्तु भोजन बनाते समय और पूजा-पाठ के समय वही ओडिया स्टाइल। बोलचाल में कुछ शब्द मुख्य रूप में पकड़ में आये। मिर्च को लंका, लड़के को पिल्ला, नतमस्तक अभिवादन को 'मुड़िया मार' अच्छा लगने को 'भालो' आदि। किसी भी घर में प्रवेश से पूर्व घर का प्रमुख-महिला या पुरुष, आकर आगन्तुक के पैर धोकर अंगोछा से पौंछकर नतमस्तक अभिवादन करके ही अपने घर में प्रवेश करायेगा।

लगभग ९० प्रतिशत लोग यज्ञोपवीत धारी मिलेंगे। भोजन में चावल के साथ तीन या चार सब्जियाँ। सब्जियों की अधिकता ही रहती थी। और साथ में होती थी नारियल की चटनी। वहाँ की देशी बनी पत्तल में खाने का स्वाद ही अलग होता था। वहाँ कृषि उपज मुख्यत: धान की एक फसल साथ में मूँग व उड़द। फलों में नारियल के वृक्ष, कहीं-कहीं आम के भी वृक्ष दिखाई दिये। काजू की फसल काफी मात्रा में नजर आयी।

लोग बड़े शान्तिप्रिय। गुण्डागर्दी, बलात्कार व डकैती की घटना सुनने में नहीं आई। पुलिस का गाँव में आना बहुत कम होता था। कोई विवाद हुआ तो आपसी पंचायत के द्वारा निपटारा होता है। पशुपालन में केवल गौधन। हर गाँव के बाहर गौवों के

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

बड़े-बड़े ५०, ६० या १०० की संख्या में झुण्ड मिलेंगे। केवल हल-बैलों से खेती। ट्रैक्टर का प्रयोग न के बराबर। हर गाँव के बीच एक पूजा स्थल। जहाँ नियमित पूजा-पाठ। वहाँ हर सायं नियम से एक कीर्तन मण्डली-ढोलक, मंजीरा और साथ में लालटेन 'हरे राम' 'हरे कृष्ण' गाते हुए दो या तीन चक्कर गाँव के लगाते। सायँकाल को हमारे प्रवचन सुनने के लिये पूरा का पूरा गाँव पुरुष-स्त्री-बच्चे सभी इकट्ठे होते थे। बड़े धैर्य एवं शान्ति से प्रवचन सुनते थे। प्रवचन के अन्त में हम लोग कुछ प्रश्नावली रखते थे। और सही उत्तर देने वाले को पुरस्कार दिया जाता था। प्रवचन में प्रकाश एवं माइक की व्यवस्था मन्दिर से ही होती थी। शंका समाधान का कार्यक्रम भी चलता था। भाषा सम्बन्धी समस्या को हिन्दी व ओडिया दोनों भाषा के जानकार ब्रह्मचारी वामदेव जी ने उपस्थित नहीं होने दिया। विशेष बात उस क्षेत्र में इस्लाम और ईसाईयत का नामोनिशान नहीं। संभवत: यही वहाँ की शान्ति का कारण था। शिक्षा का स्तर निम्न होने के बावजूद वहाँ की महिलाओं में पर्दा का रिवाज नाम मात्र की।

अंत तक हमारा यह बीस दिवस का प्रचार का कार्यक्रम बड़ा ही व्यस्तता युक्त था। समय की न्यूनता एवं वापसी के आरक्षण के कारण कई स्थानों के आमंत्रणों को टालना पड़ा। पुन: कभी अवसर मिलने पर सेवा करने का, पुन: पधारने का वचन दिया गया। हमारा सुदूर आंचलिक एवं पिछड़े ग्रामीण क्षेत्रों में पहुँचना अत्यन्त सार्थक एवं सफल रहा।

-ऋषि उद्यान, अजमेर।

साथी का वजन कैसे हो कम?

जब वजन कम करने की चुनौती हो तो अपने साथी का समर्थन और मदद बहुत काम आती है। लेकिन शोध से पता चला है कि अगर पति को वजन कम करने को प्रेरित करना हो तो पत्नी को उसकी आलोचना करनी चाहिए या मजाक उड़ाना चाहिए। कैलिफोर्निया युनिवर्सिटी लॉस एंजिल्स, फ्लोरिडा स्टेट युनिवर्सिटी, सदर्न मैथडिस्ट युनिवर्सिटी, डलास के शोधकर्ताओं ने कहा कि ''पत्नी अगर प्यार से पति को वजन कम करने के लिए कहे, तो उस पर खास असर नहीं होता पर अगर वह उसकी आलोचना करते या मजाक उड़ाए तो अवश्य वे वजन कम करने को प्रेरित होते हैं। लेकिन ध्यान रहे अगर इस तरह से पति बार-बार पत्नी को टोके, तो उनके वजन कम करने की संभावना नहीं होती है क्योंकि वे पहल से ही छरहरे रहने के लिए समाज के दबाव का सामना कर रही होती है। अत: पति के कुछ तीखे शब्दों का उन पर असर नहीं पड़ता है।''

सौजन्य-राष्ट्रदूत, दिनांक १२.०४.२०१३

संडे हो या मंडे

-चांद 'दीपिका'

संडे हो या मंडे कभी न खाना अंडे,
पडेंगे यम के डंडे हां सोच लेना।

सूरज-चांद-सितारे-धरती,
जिसने आकाश बनाया है।
सृष्टि के कण-कण जीवों में,
वो ही आप समाया है।
जीव जन्तु सब उसके बन्धु,
मार न खाना बन्दे॥
पड़ेंगे यम के डंडे.........।

स्वाद जिह्वा का बहुत बुरा है,
इसके वश न आना।
हत्यारे कातिल बन कर के,
मोद न मन में मनाना।
सजा मिलेगी कम न होगी,
पड़ा जो इक दिन फन्दे॥
पड़ेंगे यम के डंडे.........।

जैसा तुझको अपना बच्चा,
कुल, दुनिया से प्यारा है।
मुर्गी को भी अपना चूजा,
आंखों का उजियारा है।
मां के दिल को न ठेस लगाना,
मत कहलाना दरिन्दे॥
पड़ेंगे यम के डंडे.........।

मूक आह बेजुबान की,
पाताल तुझे जा धंसायेगी।
सोने की लंका यह तेरी,
आहों से जल जायेगी।
पटक-पटक पटकेगा सिर को,
कर्म पड़ेंगे न मन्दे॥
पड़ेंगे यम के डंडे.........।

**- गृ.क. ३२३, कोटली कॉलोनी, रिहाड़ी,
जम्मू-तवी-१८०००५,
मो. ०९४१९६९९४९१२**

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एक मात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रात: एवं सायं दैनिक यज्ञ- प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***- आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति नि:शुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***- अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्ण रूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था नि:शुल्क की जाती है। ***गोशाला***- गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का नि:शुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***- वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा नि:शुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***- इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोध कर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ नि:शुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***- योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में नि:शुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों से भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युत पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्ष गांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाके फोड़कर जलाते हैं असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थिति होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अत: आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

अतिथि यज्ञ के होता
(१६ से ३१ मई २०१३ तक)

१. राजाराम त्यागी, हरिद्वार, २. सुधीर गुप्ता, अम्बाला छावनी, ३. दायमा, भोपाल, ४. सतीश तनेजा व स्वर्ण तनेजा, पंचकूला, हरियाणा, ५. सुधीर कुमार साहनी, नासिक, महाराष्ट्र, ६. पुष्पा देवी झंवर, ब्यावर, ७. पदम कुमार गर्ग, बैंगलूर, ८. पंकज कुमार गर्ग, कोलकाता, ९. जय भगवान आर्य, रोहतक, १०. जनतन्त्र मोर्चा, अजमेर, ११. भागवत प्रसाद तिवाड़ी, डेगाना, १२. स्वास्तिकम चेरिटेबल ट्रस्ट, महाराष्ट्र।

गौभक्तों से निवेदन

ऋषि उद्यान में संचालित गौशाला जो परमार्थ हेतु संचालित है। गौशाला में उत्पादित गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगत अतिथियों को निःशुल्क वितरित किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौओं को उत्तम चारा मिले इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें, उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चेक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएंगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता
(१६ से ३१ मई २०१३ तक)

१. कमलेश त्यागी, रुड़की, २. वैभव तनेजा, अजमेर, ३. गंगा बिशन तापड़िया व मदन लाल जांगिड़, डेगाना, ४. छोटू राम, नागौर, ५. रत्नाराम, नागौर, ६. गोपीकिशन गहलोत, नागौर, ७. सरला, किशनगढ़, ८. पुष्पा, अजमेर, ९. विनीता, अजमेर, १०. विवेक तापड़िया, कोटा, ११. सपना आर्य, सुजानगढ़, चुरू, १२. कपिला साहनी व श्रीमान् जी, नासिक महाराष्ट्र, १३. हरिप्रसाद शर्मा, अजमेर, १४. तुलसी बाई, अजमेर, १५. शिवानी चौधरी, अजमेर, १६. नकुल आर्य, अजमेर, १७. मयंक कुमार, अजमेर, १८. भंवरी देवी, अजमेर, १९. हरिसिंह आर्य, अजमेर, २०. रामदयाल आर्य, बांदीकुई, २१. प्रेमलता शर्मा, अजमेर, २२. जुगलकिशोर रांगा, अजमेर, २३. सन्दीप कुमार, कानपुर, २४. भागवत प्रसाद तिवाड़ी, डेगाना, २५. मूलशंकर पारीक, जयपुर, २६. सुनील अरोड़ा, जयपुर।

-परोपकारिणी सभा, अजमेर।

धनराशि भेजने हेतु सूचना

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उस पर '**मन्त्री परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्त्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर

१. बैंक खाता संख्या - 091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावरहाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
IFSC - IBKL0000091

२. बैंक खाता संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC - SBIN0007959

भौतिक एवं आध्यात्मिक आवेग पृष्ठ ७ का शेष.......

मन में आ जावे, तब-तब उसे रोकना है, उसमें रुचि नहीं दिखाना है, उससे प्रभावित नहीं होना है और उसको सदा हानिकारक ही मानना है। साधक को भौतिकवाद के विपरीत अध्यात्मवाद को पुष्ट करने और बढ़ाने के उपायों को अपनाते हुए अपने आध्यात्मिक ध्येय को हस्तगत करके कृतकृत्य बन जाना चाहिए।

-ऋषि उद्यान, अजमेर।

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

आधुनिक भारतीय पुनर्जागरण का द्रष्टा-ऋषि: स्वामी दयानन्द

-डॉ. रघुवंश

आर्यों का मूल जातीय संस्कार कर्मकाण्ड रहा है। उनमें बौद्धिक प्रखरता के साथ कर्म के द्वारा उच्चतम उपलब्धियों तक पहुँचने की प्रेरणा रही है। यूनानी और भारतीय आर्यों में इस स्तर पर समानता मिलती है। यह अलग बात है कि दोनों संस्कृतियों का विकास भिन्न दिशाओं में हुआ। एक ने विश्व को समझने-समझाने के अनवरत प्रयत्न में भौतिक जीवन और जगत् के यथार्थ सत्य को उद्घाटित किया है। दूसरे ने प्रत्यक्ष जगत् के परे परम सत्ता को पहचानने के प्रयत्न में आत्मा के आन्तरिक सत्य की खोज में सदा रूचि ली है। यूनानी और उसी के आधार पर विकसित होने वाली रोमीय संस्कृतियों में मनुष्य की मेधा के विकास की सारी सम्भावनाओं के बावजूद उसके सामाजिक मूल्यों का स्रोत मानव नहीं बन सका। व्यक्तिगत आचरण की मर्यादाओं की व्याख्या की गई, पर उनसे मानवीय समाज की मूल्यगत संरचना संभव नहीं हो सकी। यही कारण है कि जब सामी ईसाई धर्म ने ईश्वरपुत्र मानव ईसा की कल्पना के साथ मानवीय मूल्यों की अवधारणा सामने रखी और इन मूल्यों को ईश्वर के संरक्षण तक पहुँचने का मार्ग बताया, यूनानी-रोमीय संस्कृति अपनी सारी समृद्धि और सम्पन्नता के बावजूद उसके सामने ठहर नहीं सकी।

भारतीय वैदिक आर्य संस्कृति में चिन्तन और कर्मकाण्ड का सामंजस्य रहा। भावमूलक मानव-मूल्यों की धारा इसमें अन्तर्भुक्त अवश्य रही है। यह स्वत: अन्तस्सलिला हो सकती है, द्राविड़ संस्कृति के संघात का परिणाम रूप हो सकती है और दोनों ही प्रक्रियाएँ समानान्तर चल सकती हैं। लेकिन यह स्पष्ट है कि यह भावधारा कभी प्रवेगवती नहीं हो सकी। चिन्तन के स्तर पर आत्मा और ब्रह्म के रहस्य को जानने का प्रयत्न हुआ और इसी सत्य के केन्द्र पर विश्व की व्याख्या की गई। दूसरी ओर कर्मकाण्ड से लोक के समस्त वैभव और परलोक में मोक्ष पाने को परमार्थ माना गया। जिन मानव-मूल्यों पर सारी संरचना हुई है, उनको बुद्धि और कर्म के वैभव में बहुत गौण स्थान मिला। तथागत बुद्ध ने बुद्धि और कर्म की इस मूल्यविहीन अतिरंजना का विरोध किया। उन्होंने मानव-मूल्यों को धर्म के केन्द्र में स्थापित किया और करुणा को इन मूल्यों के केन्द्र में माना। परन्तु कर्म-काण्डी ब्राह्मण संस्कृति का घेरा इतना कठोर था कि उनकी सहज मानवीय मूल्यों के आधार पर प्रतिष्ठित साधना-पद्धति की अपेक्षा पुन: व्यक्ति के उन्नयन के दार्शनिक चिन्तन और योगपरक साधना को महत्त्व दिया जाने लगा। बौद्धधर्म के अन्तर्गत ही महायान से सिद्धों और वज्रयानियों तक क्रमश: इन योगपरक साधनाओं के गुह्य कर्मकाण्ड में मानवमूल्य तिरोभूत हो गये।

बौद्ध धर्म के बुद्धं शरणं, संघं शरणं गच्छामि के समान ईसाई धर्म में त्रयी (ईश्वर, प्रभुपुत्र-ईसा और चर्च) को मान्यता मिली। यहाँ ईसा मानव-मूल्यों के वाहक धर्म रूप हैं। परन्तु बौद्ध धर्म के समान क्रमश: ईसाई धर्म में मूल्यों के स्थान पर चर्च (संघ) की महत्ता बढ़ती गई और व्यवस्था अधिक प्रभावी हो गई। यह महत्व की बात है कि ईसा ने यहूदी चर्च की व्यवस्था का विरोध करके धर्म के केन्द्र में मानव-मूल्यों को स्थापित किया था। पर क्रमश: ईसाई चर्च में व्यवस्था का प्राधान्य हो गया। जैसा कहा गया है, मूल्यों पर प्रतिष्ठित बौद्ध धर्म में क्रमश: कर्मकाण्ड और गुह्य साधनाओं का विकास हुआ। शंकराचार्य ने इसका विरोध किया। चिन्तन के क्षेत्र में बौद्ध तर्कपद्धति अपनाने के कारण उन्हें प्रच्छन्न बौद्ध कहा जाता है, पर उन्हें बौद्ध सम्प्रदाय धर्म को भारत से निष्कासित करने वाला भी कहा गया है। अपने मानवीय मूल्यों के आधार से हट कर बौद्ध सम्प्रदाय अनेक गुह्य साधनाओं में भटक गये थे। शंकर ने इस रहस्य के कुहासे को दूर किया और अद्वैत ब्रह्म की स्थापना की। जीवन और जगत् को मिथ्या मान लेने पर आत्मा और ब्रह्म के बीच मानव-मूल्यों की भूमिका असंगत हो जाती है। शंकर ने पारमार्थिक सत्य के साथ व्यावहारिक जीवन के सत्य को स्वीकृति देनी चाही है, जिससे मनुष्य-जीवन को आधार मिल सके, पर उनके चिन्तन की प्रखरता ही प्रभावी सिद्ध हुई है। कई शताब्दी तक भारतीय समाज में मूल्यों के क्षेत्र में विशृंखलता बनी रही। तमाम मतमतान्तर, धर्म-सम्प्रदाय चले और मूल्यों के स्थान पर कर्मकाण्ड तथा रहस्य साधनाओं का प्राधान्य रहा।

इन्हीं शताब्दियों में इस्लाम धर्म और राज-शक्ति ने क्रमश: पूरे उत्तरी भारत को आक्रान्त किया। इस्लाम की मूल प्रेरणा मानव-धर्म से अनुप्राणित है, परन्तु बौद्ध करुणा और ईसाई प्रेम की अपेक्षा इस्लामी बन्धुत्व में कबीलाई सीमा सदा बद्धमूल रही है। परन्तु इनके संगठन की यह बहुत बड़ी शक्ति थी। भारतीय समाज जिस प्रकार विशृंङ्खलित और व्यक्ति प्रधान उस युग में चल रहा था, इस स्थिति में इस्लाम के प्रबल आवेग के सामने उसका ठहरना कठिन हो गया। परन्तु दक्षिण से कई शताब्दियों से प्रवाहित भक्ति की धारा दक्षिण के आचार्यों द्वारा उत्तर में शक्ति ग्रहण कर चुकी थी और आवेगपूर्ण प्रवाह में परिलक्षित होती है। इन आचार्यों ने मानव-जीवन के सन्दर्भ में

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

अद्वैत दर्शन की सीमा को पहिचाना और उसकी ऐसी व्याख्याएँ प्रस्तुत कीं। इन सब का केन्द्रीय भाव जीवन और जगत् की स्वीकृति रहा है, चाहे अंश-अंशी भाव से अथवा सत्-चित्-आनन्द के अनुक्रम में। उन्होंने व्यक्तिपरक (मानवोपरि) रूप के स्थान पर साधना को मानवीय आधार प्रदान किया, जिसमें मानव मूल्यों की स्पष्ट स्वीकृति है। ईश्वर, आराध्य स्वामी है, पति है, प्रिय है, सखा है, पुत्र है, तो इन सम्बन्धों में मानवीय मूल्यों का प्रतिफलन है। जीवन-जगत् के साथ मानवीय मूल्यों की स्वीकृति है।

प्रेम, सेवा, त्याग, दान, सत्य, अहिंसा, दया, सत्संग, परोपकार आदि मानवीय मूल्यों को बिना साधे यहाँ आध्यात्मिक साधना की भूमिका प्रस्तुत नहीं होती, प्रयोजन सिद्ध नहीं होता। योग के माध्यम से आत्मा-परमात्मा मिलन इस दृष्टि से भिन्न है। योग की प्रक्रिया व्यक्तिपरक है, उसमें सामाजिक मूल्यों का सन्दर्भ नहीं है। वज्रयानियों और सिद्धों ने तो मूल्यों को निषेध तक किया है। जबकि भक्ति में मानवीय मूल्यों का ही आधार है। किसी भाव से, किसी सम्बन्ध की स्थिति में भक्ति करना तभी सम्भव और वास्तविक होगा जब साधक दया, सेवा, मानव प्रेम, सत्य-अहिंसा और त्याग जैसे मूल्यों से सम्पृक्त हो चुका हो। जो भक्ति की साधना को इन मूल्यों से स्वतन्त्र मान कर योग के समान मूल्यों से परे तन्मयासक्ति मानते हैं, वे प्रेम को मानवीय प्रेम से अलग अनन्य भाव मानते हैं। राजयोग भी यम-नियमों पर आश्रित है, इस प्रकार आत्मा के विकास और उन्नयन के लिए वहाँ भी मानवीय मूल्यों की भूमिका को स्वीकारा गया है। यह तो हठयोग की साधनाएँ हैं, जिनमें मानवीय मूल्यों का पूरा नकार है। यह सिद्धियों के पाने की यांत्रिक पद्धति है। फिर योग और भक्ति की मूल्यगत भूमिकाओं में अन्तर है। योग में मानवीय भूमिका प्रारम्भिक है, और इन मूल्यों की भूमिका के विभिन्न स्तरों का अतिक्रमण करते हुए साधक आत्मिक अनुभूति की उच्च भूमिकाओं पर संचरण करता है। भक्ति में साधना की उच्च भूमिकाओं पर मानवीय मूल्यों का उदात्तीकरण होता है। ईश्वरीय प्रेम की भूमि पर संचरण करना वाला साधक मानवीय सम्बन्ध में प्रेम जैसे मूल्य से सम्पृक्त रहेगा, जिसमें सेवा, त्याग, सत्य और अहिंसा जैसे मूल्य अन्तर्भुक्त हैं।

जैसा कहा गया है, भक्ति आन्दोलन भारतीय पुनर्जागरण का युग रहा है। बारहवीं-तेरहवीं शताब्दी तक भारतीय समाज विघटित और विश्रृंखलित हो चुका था। सैकड़ों जातियों, सम्प्रदायों वर्गों ओर विश्वासों-मान्यताओं में विभक्त यह समाज न जाने कितने अन्धविश्वासों, रीति-रिवाजों और जड़ताओं में ग्रस्त हो चुका था। तरह-तरह की साधना-पद्धतियाँ प्रचलित हो चुकी थीं। इसका परिणाम हुआ कि जिन मानवीय मूल्यों के आधार पर कोई भी स्वस्थ और विकसित समाज गतिशील होता या हो सकता है, उनका उस समय पूरी तरह ह्रास हो चुका था। इस परिस्थिति में इस्लाम धर्म और सैनिक शक्ति ने उत्तर भारत को आक्रान्त किया। इस अन्दर और बाहर की दुहरी चुनौती का सामना मध्ययुग के भारतीय भक्ति-आन्दोलन ने किया। इस आन्दोलन के आचार्यों और कवियों ने सामान्य जन के प्रेम के आलम्बन के रूप में लोक-रंजक और लोक-रक्षक आराध्य की स्थापना की। वह अपने प्रेम से आनन्द का स्रोत प्रवाहित करता है जो मानव जीवन को आस्थावान् और उल्लासपूर्ण बनाता है और अपनी शक्ति से दुष्टों, दानवों और आततायियों के संहार की क्षमता प्रदान करता है। उन्होंने शिव और विष्णु, राम और कृष्ण के सामंजस्य द्वारा समाज को संघटित और नियोजित भी किया। इस प्रकार भारतीय हिन्दू समाज को न केवल अस्तित्व रक्षा का वरन् गतिशील होने का मौका मिला।

ऐसा लगता है कि वैदिक युग से भारतीय समाज को रचना में निहित स्वार्थ वर्ग के प्रबल और प्रभावी होने की सम्भावना रही है। समाज को संगठित रखने के लिए उसकी रचना में सुरक्षित रखने और अनुशासित करने की दृष्टि से अधिकार-कर्त्तव्यों का सामंजस्य रखा गया था। प्रारम्भ में सम्मान और प्रतिष्ठा का आधार त्याग, तपस्या, कर्त्तव्य-क्षेत्र के विस्तार पर निर्भर था। पर इसी संरचना के अन्तर्गत निहित स्वार्थ प्रबल होता गया, वह व्यक्ति और वर्ग दोनों स्तरों पर क्रियाशील रहा है। इसके लिए भाष्यों, स्मृतियों, नव्य उपनिषदों और पुराणों आदि की रचनाएँ की जाती रही हैं। निहित स्वार्थ की शक्तियों ने बौद्ध-धर्म को स्वीकृत किया और फिर निष्कासित भी। और इन्हीं शक्तियों ने भक्ति-आन्दोलनों को पुनः नाना सम्प्रदायों, गुरु-परम्पराओं और गद्दियों में विघटित कर दिया। मानवीय मूल्यों की भूमिका तिरोहित होती गई, भक्ति भी कर्मकाण्ड, पूजापाठ, भजन-कीर्तन, गुह्य साधनाओं में पर्यवसित हो गई। मानव-प्रेम, सेवा, उपकार, सत्य, अहिंसा आदि मूल्य असंगत हो गये, विधि-विधान से और व्यक्तिनिष्ठ प्रेम से भक्ति सम्भव हो गई। फिर क्या था, जीवन के कर्त्तव्यों से विमुख रह-रह कर भक्ति करना सम्भव हो गया। जहाँ से शुरू हुआ था वहीं फिर पहुँच गये-वही विघटन, सम्प्रदायों का घटाटोप, मन्त्र-तन्त्र और व्यक्ति की स्वार्थसाधना, भले ही इस स्वार्थ का नाम 'प्रभु के चरणों में स्थान पाना' दिया गया हो।

अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक यह स्थिति बहुत बिगड़ चुकी थी। सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक स्तर पर भारतीय समाज विघटित और मूल्यों की दृष्टि से खोखला हो चुका था। पश्चिम यानी यूरोप का सम्पर्क बढ़ रहा था। यूरोप के व्यापारिक राष्ट्रों ने लाभ उठाया। उन्होंने पहले भारत की समृद्धि से लाभ उठाने के लिए यहाँ के व्यापार पर क्रमशः अपना आधिपत्य जमाया, फिर यहाँ के उद्योग-धन्धों और हस्तकौशल को अनेक कुटिल तरीकों से नष्ट किया, जिससे उनके माल की

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

खपत का बाजार मिल सके। इस क्षेत्र में भिन्न यूरोप के राष्ट्रों में प्रतिद्वंद्विता भी चली, और अन्तत: अंग्रेजों का आधिपत्य कायम हुआ। रोचक तथ्य है कि यूरोप से ईसाई मिशनरी यहाँ आकर मानव प्रेम, सेवा और त्याग का उपदेश देते थे और यहाँ की पतित जाति व्यवस्था का लाभ उठाकर मानव बराबरी के आधार पर ईसाई धर्म में लोगों को दीक्षित कर रहे थे। पर दूसरी ओर यूरोप के व्यापारी, शासक, अधिकारी आदि तरह-तरह के दंद-फंद करके अपेक्षाकृत सरल भारतीयों को ठग रहे थे। इस प्रकार एक ओर से अरबों रुपया सोना-चाँदी के रूप में- इंग्लैण्ड भेजा जा रहा था, दूसरी ओर यहाँ शासन का विस्तार भी किया जा रहा था।

अत: अगर उन्नीसवीं शती के भारत की पूरी परिस्थिति को सामने रखा जाय तो एक ओर हिन्दू समाज की विशृंखलता और मूल्यों के क्षेत्र में व्यक्तिनिष्ठा का प्राधान्य था, तो दूसरी ओर इस्लाम कुछ शताब्दियों तक विजेताओं और शासकों का धर्म रहने के कारण अपनी पराभूत अवस्था में भी हिन्दू समाज से अंग्रेजों की विदेशी शक्ति के विरुद्ध मिलने की मानसिकता नहीं रखता था। अंग्रेजों ने आगे इसका लाभ ही नहीं उठाया, वरन इस अलगाव को गहरे विरोध में परिणत किया। ईसाई धर्म शासकों के संरक्षण में हिन्दू समाज की कमजोरियों का लाभ उठा रहा था। इस समय हिन्दू समाज पुन: निहित स्वार्थ के व्यक्तियों और वर्गों से हर तरह पीड़ित और शोषित था, और अन्य धर्मों के सामने असुरक्षित भी। छुआ-छूत वर्ण-व्यवस्था का अत्यन्त विकृत रूप, मन्दिरों तथा तीर्थों में पाखण्ड और ठगी, कुरीतियाँ आदि हिन्दु समाज में व्यापक रूप में छा गये थे। चारों ओर नैतिक मूल्यों की अवहेलना हो रही थी, समाज का मानवीय मूल्यों का आधार समाप्त हो चुका था। ऐसा मूल्यविहीन विघटित हिन्दू समाज विघटित विशृंखलित रूप में राजनीतिक, आर्थिक स्तर पर विदेशी शासन के सामने टिक नहीं सका, कमजोर होता ही जा रहा था। अंग्रेज उनके पाखण्ड और उनकी स्वार्थपरता का लाभ उठा कर अपनी शक्ति और प्रभाव को बढ़ाते गये थे।

इस युग में स्वामी दयानन्द का जन्म हुआ। मूलशंकर काठियावाड़ के एक शैव परिवार में जन्में। यह आश्चर्य की बात है कि उनका जन्म गाँव में और एक विजड़ित संस्कार तथा विश्वास वाले परिवार में हुआ। उस परिवेश में किसी ओर से नये प्रकाश के आने की सम्भावना नहीं थी। पर इस बालक में जन्मजात क्रान्तिकारिता थी। बंगाल में पश्चिमी प्रभाव के अन्तर्गत अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त कर राजा राममोहन राय और केशवचन्द्र सेन जैसे व्यक्तियों ने हिन्दू समाज को रूपान्तरित करने का नया विचार दिया। पर उनके विचारों पर पश्चिम की छाप स्पष्ट परिलक्षित होती है। जबकि मूलशंकर में भारतीय हिन्दू समाज की जड़ता और विकृतियों की पहचान सहज भाव से उत्पन्न हुई। शिवलिंग पर दौड़ते हुए चूहों से उस बालक के मन में जो घटित हुआ, वह साधारण नहीं था। भारतीय समाज के अन्दर सैकड़ों वर्षों से जमती हुई जड़ता इस प्रकार उस द्रष्टा के मन में कौंध गई। फिर वह उस परिवेश से मुक्त होकर सत्य की खोज के लिए निकल पड़ा। नदी-नाले, घाटी-दर्रे, पर्वत-शिखर चारों ओर वह भटकता रहा। पण्डितों से उसने शास्त्रों का अध्ययन किया, योगियों से उसने योग सीखा। पर उसके सामने एक ही लक्ष्य था-भारतीय हिन्दू समाज को इस अन्धकार से प्रकाश में किस प्रकार लाया जाए। कुरीतियों, कुसंस्कारों, जड़ताओं, अन्धविश्वास से कैसे मुक्त किया जाए। यह लक्ष्य उनके सामने से कभी ओझल नहीं हुआ।

अन्तत: स्वामी विरजानन्द के पास उसने अध्ययन किया। गुरु-शिष्य ने एक दूसरे को पहचाना। जैसे दोनों को एक-दूसरे की तलाश थी। शिष्य शास्त्रों के अध्ययन के बाद गुरु को दक्षिणा देने के लिए प्रस्तुत हुआ, गुरु ने दक्षिणा मांगी-जाओ सत्य का प्रचार करो और अन्धकार दूर कर अपने समाज की सेवा करो। शिष्य निकल पड़ा, उसने जीवन भर गुरु दक्षिणा को चुकाया। स्वामी दयानन्द का व्यक्तित्व खण्डन-मण्डन प्रधान जान पड़ता है, क्योंकि ऐसा प्रक्षेपित किया गया है। पर यह सही नहीं है। अन्धविश्वास, पाखण्ड, कुसंस्कार, स्वार्थपरता के अन्धकार को दूर करने के लिए यह मार्ग अपनाना अनिवार्य था। इसी प्रकार दूसरे धर्मों की जड़ताओं और अन्धविश्वासों को उजागर करना जरूरी था, क्योंकि धर्म के स्तर पर अपने हिन्दू समाज में आत्मविश्वास जगाना भी जरूरी था। पर उनकी दृष्टि अन्यत्र थी, क्योंकि उनका लक्ष्य भिन्न था। समाज के स्वस्थ और गतिशील निर्माण के लिए जड़ताओं के अन्धकार को दूर करना आवश्यक था। परन्तु वास्तविक लक्ष्य तो समाज का पुनर्निर्माण ही था।

व्यापक रूप में भारतीय इतिहास में दो महत्त्वपूर्ण आन्दोलन ऐसे हुए जिन्होंने समाज को मानवीय मूल्यों से पुन: अनुप्राणित किया, जैसे उल्लेख किया गया बौद्ध धर्म (उसके साथ जैन धर्म को लिया जा सकता है) और भक्ति आन्दोलन ने इस रूप में समाज में मानव-मूल्यों की प्रतिष्ठा की है। परन्तु दोनों की परिणति पुन: विघटित होकर कर्मकाण्ड प्रधान, गुह्य और एकान्तसाधना-प्रधान-सम्प्रदयों में हुई। बौद्ध धर्म में श्रमण ओर भक्ति में एकान्तभाव पर अधिक बल रहा है। समाज के मूल्यों को आधार रूप में स्वीकार किया गया था। अन्तत: व्यक्ति के निर्वाण और मोक्ष पर बल होने के कारण सामाजिक जीवन को उपेक्षणीय और उसके मूल्यों को असंगत स्वीकार किया गया। इसी कारण शक्ति और प्रवेग से उठने वाले ये दोनों पुनर्जागरण के आन्दोलन कुछ शताब्दियों में मूल्यों के स्तर पर विघटित हो गये और भारतीय समाज पुन: पाखंड और कुसंस्कारों से ग्रस्त होकर विघटित हो गया।

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

उन्नीसवीं शताब्दी में स्वामी दयानन्द ने भारत के आधुनिक पुनर्जागरण को नये और भिन्न स्तर पर संगठित और प्रेरित किया। यूरोप के संघात से भारत एक नई परिस्थिति का सामना कर रहा था। यूरोप में ज्ञान-विज्ञान का नया युग शुरु हुआ था। उससे धर्म के कर्मकाण्डों, विधि-विधानपरक और विजड़ित रूप का विरोध और अस्वीकार स्पष्ट हुआ। वहाँ एक ओर औद्योगिकरण का क्रम चल रहा है और दूसरी ओर मानव के प्रति निष्ठा के आधार पर मानववाद का विकास हो रहा है। भारत यूरोप के सम्पर्क से एक ओर ईसाई धर्म का नया साक्षात्कार कर रहा था, दूसरी ओर ज्ञान-विज्ञान के साथ मानववाद से परिचित हो रहा था। राजा राममोहन राय और केशवचन्द्र सेन जैसे सुधारवादी इस संघात को ग्रहण कर रहे थे और उन्होंने धर्म को व्यापक मानववादी आधार पर ग्रहण किया, जिसकी मान्यताएँ मानवीय मूल्यों पर प्रतिष्ठित है। इस दृष्टि से स्वामी दयानन्द की स्थिति अप्रतिम है। उन्होंने अपनी सांस्कृतिक परम्परा से सम्पृक्त रह कर और राष्ट्रीय गौरव की भावना के उद्‌बोधन के साथ ऐसे समाज की कल्पना की जो एक ओर प्राचीन वैदिक धर्म से अपना स्रोत ग्रहण करता है, तो दूसरी ओर मानवीय मूल्यों पर बल देने वाले आधुनिक मानववाद को आत्मसात करता है।

स्वामी दयानन्द ने आर्यसमाज की कल्पना की। यह उनकी सूक्ष्म दृष्टि का परिणाम है। उन्होंने आर्यधर्म नहीं कहा, उन्होंने परम्परित हिन्दू समाज से अलग होकर सम्प्रदाय, धर्म के नाम पर, चलाने की चेष्टा नहीं की। उनका उद्देश्य पूरे भारतीय समाज को एक सांस्कृतिक ऐतिहासिक धारावाहिक इकाई के रूप में परिभाषित और संगठित करने का था। साथ ही उनका प्रयत्न था कि यह समाज कुसंस्कारों से, जड़ताओं से, अन्धविश्वासों से, कर्मकाण्डों से मुक्त होकर शुद्ध मानवीय मूल्यों के आधार पर गतिशील हो। यहाँ स्वामी जी आर्य शब्द को जाति (Race) अथवा धर्मवाचक न मान कर श्रेष्ठता वाची मानते हैं और उनके अनुसार जो भी श्रेष्ठ मानवीय मूल्यों का आचरण करता है, वह आर्य है। उन्होंने जाति, वर्ण, धर्म के परे ऐसे समाज की कल्पना की जो इन मूल्यों का जीवन बिताने के लिए प्रयत्नशील हो।

उन्होंने यह अनुभव किया होगा कि जब-जब समाज को मूल्योन्मुखी करने का प्रयत्न किसी विशेष संघठन के नाम पर किया जाता है तो आगे चल नामधारी धर्म या सम्प्रदाय प्रमुख हो जाता है और मूल्य गौण हो जाते हैं, यहाँ तक कि वे विकृत और भ्रष्ट हो जाते हैं। स्वामी जी ने इसी कारण अपने आन्दोलन को ऐसा नाम नहीं दिया। यही नहीं उन्होंने जब वैदिक धर्म की व्याख्या की, अपनी समृद्ध सांस्कृतिक परम्परा को स्थापित करने का प्रयत्न किया, नाम देने का आग्रह नहीं किया। अपनी व्याख्या में उन्होंने पूरा प्रयत्न किया कि भारतीय धर्म, दर्शन, अध्यात्म से उन तत्त्वों को उजागर किया जाय जो व्यक्ति और समाज को ऊँचे मूल्यों के स्तर पर प्रतिष्ठित और विकसित करते हैं और ऐसे अंशों, पक्षों और तत्वों का अवैदिक (यानि जो श्रेष्ठ मूल्य परम्परा में नहीं आते) कह कर खण्डन किया जो या तो मानवीय मूल्यों के विपरीत पड़ते हैं या गलत, पक्ष-विपक्ष, अर्थ-अनेकार्थ को स्वीकार नहीं करता, वरन् अपने समाज को मानवीय मूल्यों की उच्चस्तरीय भूमिकाओं की ओर प्रेरित करने की दृष्टि से सत्य को ग्रहण करता है।

स्वामी दयानन्द ने वेद और उपनिषदों को स्वीकार किया, उपनिषदों में केवल प्राचीनों को। और उनकी अपनी व्याख्या की, व्याख्यान पद्धति अपनाई। पुराणों के बृहद् साहित्य को प्रमाण की दृष्टि से उन्होंने अस्वीकार किया। वेदों के अर्थ की, व्याख्या की सही पद्धति क्या थी, मध्य युग में अनिश्चित था। स्वामी जी ने जिस पद्धति को अपनाया, उसकी प्रामाणिकता के बारे में मैं यहाँ ऊहापोह में नहीं पड़ता। मेरे सामने उनकी वह दृष्टि है जिसके सहारे उन्होंने एक ओर भारती समाज को उच्च मानवीय मूल्यों की ओर प्रेरित और गतिशील करना चाहा, दूसरी ओर प्राचीन सांस्कृतिक मूल्य-परम्परा में उसे देखना चाहा। यही कारण है कि उन्होंने वेदों और उपनिषदों की एक व्याख्यान पद्धति अपनाई, और पुराणों को उनकी सारी सर्जनशील समृद्धिके बावजूद अस्वीकार कर दिया। अद्वैत जैसा दर्शन अगर व्यक्ति को मानवीय समाज और उसके सांसारिक परिवेश से मुक्त कर आत्मा रूप में प्रतिपादित करता है, तो उन्हे वह स्वीकार्य है। वे मनुष्य के व्यक्ति और समाज के सम्बन्ध को और जगत् में उसकी स्थिति को दर्शन और धर्म में समान रूप से स्वीकार करते हैं। भारतीय चिन्तन और साधना के ऐसे अनेक स्तर और आयाम उद्‌घाटित हुए हैं, जिन पर व्यक्ति आत्म-तत्त्व के रूप में सामाजिक (मानवीय) सन्दर्भों से मुक्त हो जाता है। स्वामीजी ने अनुभव किया कि इन ऊँचाइयों में बहुत भटकाव है, इन्हीं के कारण इस देश में अनेक चिन्तन-पद्धतियाँ और साधना के रूप विकृत होते रहे हैं। अत: उन्होंने इस आधार को अस्वीकार किया। यहाँ एक सन्दर्भ याद आता है। स्वामी जी योगी थे, वर्षों-वर्षों उन्होंने योगाभ्यास किया था। किसी ने उनसे कहा कि स्वामी जी आप योग से परम ब्रह्म प्राप्त कर सकते हैं, फिर समाज की चिन्ता में क्यों भटकते हैं। उन्होंने तत्काल उत्तर दिया कि अपने समाज के उन्नयन और कल्याण के लिए मुझे कई जन्म लेने पड़े तो मैं तैयार हूँ, ब्रह्मप्राप्ति तब तक स्थगित रहेगी। इस कथन में बहुत बड़ा सत्य निहित है।

स्वामी जी ने धार्मिक और सामाजिक संस्कारों और कर्मकाण्डों से एक विशिष्ट वर्ग के रूप में पुरोहित को हटा दिया। इसी प्रकार साधु-संन्यासी की स्थिति को बदल दिया। समाज के द्वारा पूजा पाने वाले और मात्र आशीर्वाद देने वाले साधुओं-संन्यासियों को उन्होंने समाज में स्वीकृति नहीं दी। इस रूप में उस पर समाज की सेवा, शिक्षा और उसके उन्नयन का दायित्व रखा। अन्यथा अपने गृहस्थ-आश्रम के कर्त्तव्य को

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

निभाने के बाद व्यक्ति को वानप्रस्थ आश्रम में समाज की सेवा और शिक्षा का दायित्व निभाना अपेक्षित है। संन्यास आश्रम में आत्मोन्नयन के साथ व्यक्ति का अपने समाज को उच्चादर्शों की ओर प्रेरित करना कर्त्तव्य है। इन मान्यताओं के पीछे गहराई से देखने पर स्वामी जी की पूरे भारतीय समाज के इतिहास को समझ कर कर्त्तव्य को देखने वाली सूक्ष्म दृष्टि है। पुरोहित गृहस्थ के सामाजिक दायित्व और उच्चादर्शों का पथप्रदर्शक नहीं रह गया, जो उसका दायित्व था। निहितस्वार्थ होकर यह एक वर्ग बन गया। इसने सत्ता की प्रतिद्वंद्विता में कुटिल से कुटिल दाँव लगाये। समाज पर प्रभुत्व जमाने के लिए तमाम कर्मकाण्डों को जन्म दिया, तमाम अन्धविश्वासों को प्रश्रय दिया। अत: स्वामी जी ने यज्ञ-विधान और संस्कार-पद्धतियों के लिए सम्माननीय गृहस्थ को, स्त्री या पुरुष को अधिकार प्रदान किया। और हर अवसर पर सम्मिलित रूप से कर्त्तव्यों और मूल्यों के स्मरण करने का विधान किया।

इसी प्रकार स्वामी जी की प्रतिभा और दृष्टि का इस बात से भी प्रमाण मिलता है कि उन्होंने आर्यसमाजों के संचालन का दायित्व और अधिकार गृहस्थ स्त्री-पुरुष सदस्यों को सौंपा, वह भी लोकतान्त्रिक पद्धति से। साधु-संन्यासी किसी मन्दिर या अन्य किसी समाज की सम्पदा के अधिकारी नहीं रहे, यद्यपि उनको हर प्रकार की सुविधाएँ प्रदान करने का विधान किया गया है। परम्परित तमाम मन्दिरों की जागीरों और सम्पदाओं के उपयोग को देखते यह विधान अधिक सामाजिक उपयोग का समझा जा सकता है। इसी प्रकार सामाजिक सेवाओं के लिए चलाई जाने वाली शिक्षा संस्थाओं और औषधालयों की व्यवस्था उन्होंने लोकतान्त्रिक ही परिकल्पित की। इस प्रकार समाज सेवा का कार्य सहयोग और प्रेम से इस प्रकार सम्पादित हो जिससे समाज में मूल्यों का विकास हो सके। दूसरी ओर कोई निहितस्वार्थ का वर्ग न उत्पन्न हो सके।

स्वामी दयानन्द ने हिन्दू धर्म (भारतीय धर्म के रूप में) और संस्कृति की सुरक्षा की दृष्टि से और उसके वर्चस्व को स्थापित करने के लिए उसके अन्धविश्वासों, कुसंस्कारों, कुरीतियों, जड़ताओं पर प्रहार किया। साथ ही दूसरे धर्मों की इसी स्तर पर कड़ी आलोचना की, क्योंकि उनकी मान्यता थी कि धर्म, सम्प्रदाय के रूप में ऐसा ही जड़ और कुसंस्कार ग्रस्त हो जाता है। इस दृष्टि से इस्लाम और ईसाई धर्म भी कट्टरपंथी, अंधविश्वासी और निहितस्वार्थियों के द्वारा नियंत्रित है। ध्यान देने की बात है, वे धर्मों में सामंजस्य स्थापित करने के पक्षधर थे। उन्होंने अन्य धर्मावलम्बियों के नेताओं से इस सम्बन्ध में चर्चाएँ भी कीं। उनका दृष्टिकोण था कि अगर मूल मानवीय धर्म को स्वीकार करके विभिन्न सम्प्रदाय चलें तो वे कुसंस्कारों और जड़ताओं से मुक्त होकर मूल्यों पर प्रतिष्ठित रह सकते हैं और आपसी वैमनस्य से भी मुक्त हो सकते हैं। पर हम धर्म-सम्प्रदाय में निहितस्वार्थ वर्ग इतना प्रबल है कि वह स्वामी जी की दृष्टि को न समझ सकता था और न उनके विचारों को मान सकता था। उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को समझने के लिए उसके इस पक्ष को दृष्टि में रखना आवश्यक है। उनके व्यक्तित्व की प्रेरणा के कारण राष्ट्रीय आन्दोलन में प्रारम्भ से आर्यसमाज को मानने वाले तमाम लोग रहे हैं। उनकी स्वयं की दृष्टि राष्ट्रीय रही है, देश को स्वाधीन करने के बारे में और देश को मूल्यों के स्तर पर उन्नत और संगठित करने के लक्ष्य से भी। उनका मतभेद भी महत्त्वपूर्ण था। उनके अनुसार देश में सामाजिक जीवन को संगठित, उन्नत मूल्यों पर प्रतिष्ठित करना पहला कार्य है, राष्ट्रीय स्वाधीनता उसके आधार पर प्राप्त करना न केवल आसान है, वरन् उसे सुरक्षित रख देश को विकसित करना भी अधिक सरल है। जबकि काँग्रेस के राजनीतिक नेता मानते थे कि देश को पहले स्वतन्त्र करना है, स्वतन्त्र होने पर उसे विकसित और उन्नत करना आसान होगा। यह तो हमारे सामने घटित होने वाले इतिहास ने प्रत्यक्ष कर दिया है कि राष्ट्रीय भविष्य के बारे में उन्नीसवीं शती में किसकी दृष्टि सही थी।

वैचारिक क्रान्ति हेतु सत्यार्थप्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र प्रचार-प्रसार की योजना

सभी धर्म प्रेमी सज्जनों, आर्यसमाजों व संस्थाओं से निवेदन है कि इस कार्य को सफल बनाने हेतु शीघ्रता से अपना आर्थिक सहयोग परोपकारिणी सभा को भिजवायें ताकि तदनुरूप कार्य को आगे बढ़ाया जा सके। सहयोग भिजवाते समय **सत्यार्थप्रकाश का प्रचार-प्रसार** शीर्षक लिखना ना भूलें। धन्यवाद।

अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क सूत्र-आचार्य दिनेश शास्त्री, ऋषि उद्यान, अजमेर। **चल दूरभाष**-०७७३७९०४९५०, ०९६०२९२१३७३

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

महर्षि दयानन्द सरस्वती और महाराणा सज्जनसिंह

-गौरी शंकर-हीराचन्द औझा

महर्षि दयानन्द सरस्वती का नाम सारे संसार में प्रसिद्ध है। वे वैदिक धर्म के संस्थापक और वर्तमान हिन्दू-धर्म की प्रचलित मूर्ति-पूजा आदि कई बातों के खंडन-कर्त्ता माने जाते हैं। महर्षि ने प्रचलित हिन्दू-धर्म की कई बातों की उपेक्षा कर उनके विरुद्ध खंडन का बीड़ा क्यों उठाया? इसका कोई गूढ़ कारण होना चाहिए, क्योंकि उनको धन एकत्र कर सुख-भोग की इच्छा नहीं और न किसी धर्म के आचार्य होकर मठाधीश बनने की लालसा थी।

वे यह मानते थे कि प्राचीन वैदिक धर्म शुद्ध, आडम्बर-शून्य और जीवमात्र के हित के लिये था, परन्तु पीछे से उसमें बहुत-कुछ परिवर्तन होकर विद्या का अभाव, मत-मतान्तर, रीति-रिवाज और भेद-भावरूपी अनेक कीड़े लग गये, जो समग्र हिन्दू जाति को नाश की ओर ले जा रहे हैं। वर्णाश्रम-व्यवस्था लुप्त हो जाने से सैकड़ों जातियाँ और उपजातियाँ बनकर भेदभाव और ऊँच-नीच की भावना बढ़ते-बढ़ते पारस्परिक वैमनस्य का कारण हो गई। तीर्थस्थल, मंदिर और मठ, जो शान्ति प्राप्त करने के लिए बनाए गए थे, विलासिता के केन्द्र बन गए। पंडे, पुजारी और मठाधीश पीड़ित हिन्दू जनता का रक्त शोषण कर उसे निर्धन बनाने के साथ ही द्रव्य का दुरुपयोग करते रहे। विद्या का अभाव होने से मनुष्य जीवन के महत्त्व को भूलकर वे शास्त्रों के गूढ़ रहस्य को जानने से वंचित रह गये। कला-कौशल का नाश होने से पराश्रय में रहकर जीवन व्यतीत करना पड़ता और बेकारों की संख्या बढ़ती जा रही है। बालविवाह, वृद्ध विवाह और बहु विवाह की प्रथा से देश को महान क्षति पहुँचती है और आश्रम धर्म उठता जा रहा है। विचारों की संकीर्णता के कारण प्रतिवर्ष हजारों हिन्दू दु:खी हो अन्य धर्म का आश्रय लेते हैं और सामाजिक कुप्रथाओं के कारण विधवाओं की संख्या बढ़कर कई मारी-मारी फिरती हैं, जिससे अनाचार की वृद्धि होती और हिन्दू जाति का ह्रास होता है। अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए पन्द्रह वर्ष से चालीस वर्ष की आयु तक निरन्तर तपस्या और विद्याध्ययन के प्रभाव से महर्षि ने एकमात्र वैदिक धर्म के अभाव को इन सब बुराइयों की जड़ जानकर यह संकल्प किया कि नष्टप्राय वैदिक धर्म को पुन: भारत में फैलाकर सोई हुई हिन्दू जाति को जगाया जाय, तभी हिन्दू जाति का अस्तित्व रहेगा। अपने इस संकल्प को सिद्ध करने के लिये महर्षि ने कौन-कौनसे कार्य किये, उनका इस लेख में संक्षेप से वर्णन किया जाता है, परन्तु इसके पहले थोड़े से शब्दों में यह बतलाना आवश्यक है कि बौद्ध और जैन धर्म की उन्नति के दिनों में उसकी कैसी दशा रही और फिर उसका रूपान्तर होते-होते वह किस दशा को पहुँचा।

वैदिक धर्म आर्य जाति का सब से प्राचीन धर्म है। ईश्वर की उपासना, यज्ञ, वर्ण व्यवस्था आदि इसके मुख्य अङ्ग थे। समस्त जनता ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, इन चार वर्णों में विभक्त थी और इनमें परस्तर घनिष्ठ सम्बन्ध था और प्रत्येक वर्ण का पुरुष अपने तथा अपने से नीचे के वर्णवालों में विवाह भी कर सकता था। शूद्रों का सेवा कार्य होने पर भी उनका पंचमहायज्ञ करने का अधिकार था, जैसा कि पतञ्जलि के महाभाष्य तथा कैय्यट की टीका से ज्ञात होता है। ईश्वर के भिन्न-भिन्न नामों के अनुसार उसकी उपासना पृथक्-पृथक् रूप में होती थी। अनार्य या विधर्मियों के लिये भी इस धर्म का द्वार खुला हुआ था। यज्ञों में पशु-हिंसा होती थी और मांस-भक्षण का प्रचार बढ़ा हुआ था। अहिंसा के समर्थक इसका विरोध भी किया करते थे। इस हिंसा-वृत्ति को रोकने के लिये ईसवी सन् पूर्व की छठी शताब्दी में क्षत्रियवंशी बुद्ध और महावीर ने क्रमश: बौद्ध और जैन धर्म का प्रचार आरम्भ किया। इन दोनों धर्मों में अहिंसा की प्रधानता थी। ये दोनों धर्म, अनीश्वरवादी होने पर भी, दिन-दिन उन्नति करने लगे और राज्याश्रय मिलने पर उनके अनुयायी बहुत हो गये, जिससे वैदिक (ब्राह्मण) धर्म का प्रभाव घटने लगा।

ईसवी सन् पूर्व की तीसरी शताब्दी में मौर्यवंशी सम्राट अशोक ने बौद्ध धर्म ग्रहण कर अपने राज्य भर में उसकी बहुत उन्नति की। इतना ही नहीं, किन्तु भारत के बाहर सुदूर देशों में भी उसके प्रचार के लिये उसने उपदेशक भेजे। बौद्ध-धर्म के उपदेशकों ने शनै:-शनै: नि:स्वार्थभाव से इस धर्म का प्रचार भारत के बाहर ब्रह्मदेश, स्याम, चीन, जापान आदि देशों में किया। साइबीरिया और मध्य एशिया भी इस धर्म के अनुयायी हो गये। ईसवी सन् पूर्व की दूसरी शताब्दी में मौर्य-साम्राज्य के अन्तिम राजा बृहद्रथ को मारकर उसका सेनापति शुंगवंशी पुष्यमित्र उसके राज्य का स्वामी बन गय और उसने वैदिक धर्म का पक्ष लेकर फिर अश्वमेघ यज्ञ जारी किया, परन्तु सौ वर्ष से कुछ अधिक रहकर वह वंश भी समाप्त हो गया। फिर भी बौद्ध धर्म का प्रचार बढ़ता गया, जिसके फलस्वरूप कई वैदिक-धर्मावलम्बी ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रों ने भी बौद्ध धर्म को ग्रहण किया। वैश्यों ने अपने परम्परागत कृषि-कर्म को छोड़ दिया, तब शूद्रों ने उसे अङ्गीकार कर लिया।

ईसवी सन् पूर्व की दूसरी शताब्दी में जैन धर्मावलम्बी, प्रतापी एवं विजयी राजा खारवेल ने जैन धर्म के प्रचार के लिये बहुत कुछ उद्योग किया। कुषाणवंशी राजा कनिष्क ने ईसवी

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

सन् की पहली शताब्दी में बौद्ध धर्म की और भी उन्नति की। इस प्रगति का वेग गुप्तों के राज्य के प्रारम्भ काल तक बना रहा। इसका परिणाम यह हुआ कि बौद्ध धर्म का प्रचार बढ़ने और वैदिक धर्म का ह्रास होने लगा। ब्राह्मणों की सत्ता दिन-दिन निर्बल होती गई और बौद्धों तथा ब्राह्मणों में पारस्परिक द्वेष बहुत बढ़ गया। ब्राह्मणों ने बौद्ध धर्म ग्रहण करने वाले समस्त क्षत्रियों, वैश्यों आदि को 'वृषल' अर्थात् धर्मच्युत माना और बौद्ध-प्राय देशों में तीर्थ यात्रा के बिना जाने वालों के लिये फिर से संस्कार कराने की विधि प्रचलित की।

कुछ समय पश्चात ब्राह्मणों को अपनी भूल की सूझ पड़ी। उन्होंने बौद्ध और जैन-धर्मावलंबियों को फिर अपने (वैदिक) धर्म में लाने की चेष्टा की, इतना ही नहीं, किन्तु उनको अपने वैदिक धर्म में परिवर्तन भी करना पड़ा और एक नवीन साँचे में ढलकर वह पौराणिक धर्म बन गया। उसमें बौद्ध और जैनों से मिलती-जुलती धर्म सम्बन्धी बहुत सी नई बातें जोड़ी गई और बुद्ध तथा महावीर की गणना विष्णु के अवतारों में हुई। मांस-भक्षण का भी निषेध किया गया और मूर्ति पूजा की प्रवृत्ति बढ़ी। उसमें अनेक देवी-देवताओं की कल्पना की गई। यह परिवर्तित धर्म इस समय 'सनातन धर्म' नाम से प्रसिद्ध है।

यह बात इतने ही से न रुकी, किन्तु सुदूरवर्ती दक्षिण (मद्रास प्रान्त) के ब्राह्मणों ने तो पुराणों के इस कथन-'शिशुनाग वंश के अंतिम राजा महानंदी के पीछे शूद्रप्राय राजा होंगे'-पर विश्वास कर केवल दो ही वर्ण मान लिये, जो ब्राह्मण और अब्राह्मण (शूद्र) नाम से प्रसिद्ध हुए। उनकी देखादेखी महाराष्ट्र के ब्राह्मणों ने भी ऐसा ही किया। ईसवी सन् की तेरहवीं शताब्दी के कुछ पीछे तक के शिलालेखों, दानपत्रों और प्राचीन ऐतिहासिक पुस्तकों से ज्ञात होता है कि महाराष्ट्र के ही नहीं, किन्तु सुदूरवर्ती दक्षिण (मद्रास प्रान्त) के राजा अपने को बराबर क्षत्रिय मानते रहे, तो भी ब्राह्मणों की प्रबलता तथा प्रधानता के कारण उनका आदेश चल निकला और क्षत्रियों को भी शूद्र मानकर उन्होंने उनकी धार्मिक क्रियाएँ वैदिक रीति से नहीं, किन्तु पौराणिक पद्धति से कराना शुरू कर दिया। उनके यजमानों के अज्ञान के कारण यह पद्धति कुछ समय तक चलती रही। फिर कमलाकर पंडित ने 'शूद्र कमलाकर' (शूद्र-धर्म-तत्त्व) नामक ग्रंथ लिखकर उनकी धर्म-क्रियाओं की पौराणिक विधि स्थिर कर दी। जब प्रसिद्ध राजा छत्रपति शिवाजी ने महाराष्ट्र में अपना राज्य स्थापित किया और अपना राज्याभिषेकोत्सव करना स्वीकार न किया। इस पर शिवाजी ने काशी से विश्वेश्वर भट्ट (उपनाम गागा भट्ट) नामक विद्वान् को, जो उस समय का वेदव्यास माना जाता था, बुलाकर अपना राज्याभिषेक वैदिक विधि से करवाया और उनके पूर्वज मेवाड़ के सूर्यवंशी सीसोदिया क्षत्रिय होने से उन्होंने अपनी राज्यमुद्रा में 'क्षत्रिय-कुलावतंस श्री राजा शिव छत्रपति' लेख खुदवाया। शिवाजी के पीछे यह भावना लुप्त हो गई। सद्भाग्य से उत्तर भारत के ब्राह्मणों ने इस प्रथा का अनुमोदन न किया, किन्तु बौद्धों के अवनति-काल में जो लोग फिर वैदिक धर्म में आना चाहते, उन्हें प्रारम्भ में 'व्रात्यस्तोम' क्रिया से और पीछे से बिना किसी क्रिया के फिर से उनके मूलवर्ण में मिलाने लगे।

ब्राह्मणों के इस परिवर्तित धर्म की गुप्त राजाओं के समय से उन्नति होने लगी और क्रमशः बौद्ध धर्म की अवनति होते-होते दसवीं शताब्दी के आसपास भारत के अधिकांश भाग से बौद्ध धर्म का अस्तित्व उठता गया। गुजरात के प्रतापी राजा कुमारपाल के पश्चात् उधर जैन धर्म का विकास भी रुक गया। इसके अनन्तर मुसलमानों का राज्य भारत में होने के समय से वे भी भारतवासियों को अपने धर्म में मिलाने लगे, जिससे मुसलमानों की संख्या में वृद्धि होती गई। ब्राह्मणों के धर्म में मत-मतान्तरों की संख्या बढ़ गई। क्षत्रिय (राजपूत) वर्ण को छोड़कर अन्य वर्णों में इतनी उपजातियाँ बन गईं कि एक-दूसरे के साथ का खान-पान और विवाह सम्बन्ध छूट गया। इस प्रकार जो हिन्दू जाति पहले सभ्यता के आदर्श पर रहकर केवल चार वर्णों में ही विभक्त थी, वह हजारों जातियों और उपजातियों में विभक्त होकर इस समय मृतप्राय दशा को पहुँच गई। वैदिक काल की 'व्रात्यस्तोम' क्रिया का लोप होने से हिन्दुओं की जनसंख्या बराबर घटती ही गई। अंग्रेजी राज्य का अभ्युदय होने पर ईसाई धर्म को भी यहाँ प्रचार होने लगा और जातिगत संकीर्णता बढ़ जाने से कई लोग उदासीन हो ईसाई धर्म भी ग्रहण करने लगे। फिर पारस्परिक भेदभाव भी बढ़ता गया और ऊँच-नीच का प्रश्न उत्पन्न हो गया। इससे पारस्परिक प्रेम में न्यूनता होकर एक-दूसरे में बड़ा अन्तर पड़ गया। अपने इस संकुचित व्यवहार के कारण एक समय जो हिन्दू जाति उच्च विचारों से भूषित होकर विशाल हृदय कहलाती थी, वह पतनोन्मुख होकर मृतप्राय बन गई, परन्तु फिर भी हमारे धर्माचार्यों का इस ओर जरा भी ध्यान आकृष्ट न हुआ और वे उल्टे पारस्परिक द्वेष को बढ़ाते ही गये।

जब अधोगति चरम सीमा तक पहुँच जाती है, तब उस जाति में कोई महान् पुरुष उत्पन्न होता है, यह प्राचीन सिद्धान्त है। तदनुसार जब हिन्दू जाति पतन के समीप पहुँचने लगी, तब उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में वि.सं. १८८१ (ई.स. १८२४) में काठियावाड़ के मोरवी राज्य के टंकारा गाँव में एक औदीच्य ब्राह्मण के घर में बालक मूलशंकर का जन्म हुआ। बाल्यकाल से ही इस बालक में प्रतिभा दृष्टिगोचर होने लगी और चौदह वर्ष की आयु में उसने सारी शुक्ल यजुर्वेद संहिता कंठस्थ कर ली। एक बार शिवरात्रि के दिन शिवलिंग का पूजन करते समय लिंग पर एक चूहा चढ़ गया और उसके ऊपर चढ़ाई हुई सामग्री को खाने लगा। यह देख बालक मूलशंकर के हृदय में एकदम महान् परिवर्तन हो गया और जड़वाद का नाश होकर उसमें

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

सत्यान्वेषण की धुन पैदा हुई। उसकी अन्तरात्मा जाग उठी और उसमें जगत् के कल्याणकारी परमपिता परमेश्वर की प्राप्ति के लिए उत्कट इच्छा उत्पन्न हुई, हृदयस्थल में अन्तर्नाद होने लगा और उसे निश्चय हो गया कि मूर्तिपूजा ईश्वर-प्राप्ति का साधन नहीं है। बालक मूलशंकर के हृदय की इस उथल-पुथल में ही दो वर्ष के पश्चात् उसकी छोटी बहिन की मृत्यु हो गई और फिर चाचा का भी देहान्त हो गया, जिससे जिस भाँति गौतम बुद्ध को संसार से निराशा हो गई थी, उसी प्रकार उसका चित्त भी संसार से हट गया। आशावाद का अन्त हुआ और अमर फल पाने की लालसा जाग उठी। माता-पिता ने उसको विवाह द्वारा सांसारिक बन्धनों में जकड़ना चाहा, परन्तु दृढ़प्रतिज्ञ मूलशंकर ने उस ओर ध्यान नहीं दिया। वह बीस वर्ष की आयु में घर से निकल गया। उसने पूर्णानन्द सरस्वती नामक विद्वान् से संन्यास ग्रहण कर अपना नाम दयानन्द सरस्वती रखा। तदनन्तर स्वामी जी ने योग की क्रिया को सीखना आरम्भ किया और व्याकरण में अपनी गति बढ़ाई। इस प्रकार वि.सं. १९११ तक वे इधर-उधर फिरते हुए विद्वान्, महात्माओं और योगियों के सत्संग से लाभ उठाकर अपनी आत्मिक उन्नति करते रहे। फिर वे हिमालय की ओर गये, पर वहाँ भी उनके मानसिक परितोष का साधन न मिला। तत्पश्चात् वे नर्मदा तट पर तीन वर्ष तक विचरते रहे और वहाँ से मथुरा जाकर प्रसिद्ध विद्वान् स्वामी विरजानन्द जी से वेद और आर्षग्रन्थों का अध्ययन करने लगे। अष्टाध्यायी, महाभाष्य, वेदान्तसूत्र आदि कई ग्रन्थों का अध्ययन करने के पश्चात् अपने शिक्षा-गुरु की आज्ञा के अनुसार हिन्दू जाति को मतमतान्तर के बन्धनों से छुड़ाकर सच्चे धर्म पर लाने के लिये उन्होंने अपना कार्य आरम्भ कर दिया।

सर्वप्रथम महर्षि ने वि.सं. १९२० (ई.सं. १८७३) में आगरे में उपदेश देना आरम्भ किया और वहाँ से करौली, धौलपुर, ग्वालियर, जयपुर, कृष्णगढ़, अजमेर, पुष्कर, मथुरा, मेरठ, अनूपशहर, सोरों, शाहबाजपुर, फर्रुखाबाद, कानपुर, बनारस, डुमराँव, पटना, मुंगेर, भागलपुर, वृंदावन, प्रयाग, जबलपुर, बम्बई, अहमदाबाद, राजकोट, पूना, लुधियाना, लाहौर, जालंधर, फिरोज़पुर, रावलपिंडी, झेलम, गुजराँवाला, मुलतान, रुड़की, दिल्ली, देहरादून, मुरादाबाद, बदायूं, बरेली, लखनऊ आदि नगरों में जाकर उन्होंने प्राचीन वैदिक धर्म का प्रचार किया। उनको अनेक स्थानों में से कुछ में महर्षि का कई बार जाना हुआ और प्रत्येक बार उन्हें सफलता मिली। उनके उपदेशों से अपूर्व जागृति उत्पन्न हुई और उनके व्याख्यान सुनने से लोगों की प्राचीन वैदिक धर्म की तरफ फिर श्रद्धा बढ़ने लगी। हिन्दू धर्म को सारहीन समझकर जो लोग अन्य धर्म ग्रहण करते थे, उन्हें जान पड़ा कि वैदिक धर्म में जो उत्तमता है वह अन्य धर्मों में नहीं। इसके अतिरिक्त बाल-विवाह, वृद्ध विवाह तथा बहुविवाह बंद करने और गुरुकुल, अनाथालय, विधवाश्रम, विद्यालय आदि संस्थाएँ खोलकर जनता का हित करने के विचारों का अंकुर लोगों के चित्त में उत्पन्न हुआ। नियमित रूप से उपदेश होते रहने के लिये प्रत्येक जगह आर्यसमाज स्थापित होकर पंजाब आदि देशों में बड़ी जागृति हुई। हजारों मनुष्यों ने वैदिक धर्म ग्रहण किया, छुआछात का भूत मिटने लगा और वैदिक धर्म से च्युत होकर अन्य धर्मों में गए हुए व्यक्तियों की पुनः शुद्धि करा उन्हें वैदिक धर्म में मिलाने की ओर भी प्रवृत्ति बढ़ने लगी।

अब तक महर्षि का राजपूताने के अधिकांश प्रदेश में शुभागमन नहीं हुआ था। वहाँ प्रचार की अत्यन्त आवश्यकता थी, इसलिये वे जून सन् १८८१ ई. को मसूदे गये और वहाँ से रायपुर होते हुए ब्यावर पहुँचे। महर्षि वहाँ से बनेड़ा और चित्तौड़ होते हुए बम्बई जाने वाले थे। उस समय भारत के वाइसराय लॉर्ड रिपन चित्तौड़ जाकर मेवाड़ के महाराणा सज्जनसिंह को जी.सी.एस.आई. का खिताब देने वाले थे। उसके उपलक्ष्य में उक्त महाराणा ने वहाँ एक विशाल दरबार करने का आयोजन किया, जिसमें लगभग ६० हजार पुरुष एकत्र हुए। महर्षि ने तत्कालीन मेवाड़-पति महाराणा सज्जनसिंह का विद्याप्रेम, गुणग्राहकता, धर्माभिरुचि, कुलाभिमान, न्यायप्रियता, शासन-सुधार एवं सामाजिक सुधार आदि की प्रशंसा सुन रखी थी, जिससे उस समय वहाँ ठहरकर उपदेश द्वारा उनको अपना अनुयायी बनाने और वहाँ की जनता में प्राचीन वैदिक धर्म का प्रचार करने की इच्छा हुई, क्योंकि भारतवर्ष के हिन्दू राजाओं में मेवाड़ के महाराणाओं का सर्वोपरि स्थान है। प्रत्येक हिन्दू मेवाड़ के महाराणा को बड़ी श्रद्धा से देखता और उन्हें अपना नेता मानता है, क्योंकि मुसलमानों के राजत्त्वकाल में, जब हिन्दू धर्म की अवहेलना हो रही थी, मेवाड़ के महाराणा ही उसकी रक्षा कर रहे थे। अनेक बार रक्त-रंजित होने से मेवाड़ की वीर भूमि तीर्थ स्थल समझी जाती है, अतएव महर्षि ने भी इस अवसर पर वहाँ जाने का निश्चय किया।

महाराणा सज्जनसिंह का महर्षि से सम्बन्ध-ता. ६ अक्टूबर ई. सं. १८८१ (वि.सं. १९३८) को महर्षि बनेड़े पहुँचे वहाँ के स्वामी राजा गोविंदसिंह ने, जो संस्कृत के विद्वान् थे, महर्षि का अच्छा सत्कार किया। उनके दोनों राजकुमारों-अक्षयसिंह और रामसिंह ने महर्षि को साम-गान सुनाया, जिससे उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। वहाँ के पुस्तकालय से महर्षि ने वेद का निघंटु ग्रन्थ लेकर अपने पास की प्रति से उसका मिलान किया। वहाँ से विदा होकर वे ता. २६ अक्टूबर सन् १८८१ ई. को चित्तौड़ पहुँचे। महाराणा की आज्ञा के अनुसार कविराजा श्यामलदास ने महर्षि के स्वागत का समुचित प्रबन्ध करवा दिया। नियमानुसार महर्षि ने वेदोक्त आर्यधर्म का वहाँ प्रचार करना आरम्भ किया। उनके उपदेशों को सुन मेवाड़वासी जग गये। विरोधियों ने विष उगलना आरम्भ किया, परन्तु उनकी एक न चली। महर्षि के

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

उपदेशों को सुनने के लिये मेवाड़ के प्रतिष्ठित सरदारों में से देलवाड़े के राज फतहसिंह, कानोड़ के रावत उम्मेदसिंह, शाहपुरे के राजाधिराज नाहरसिंह, आसींद के रावत अर्जुनसिंह, शिवगढ़ के महाराज रायसिंह आदि प्रायः उनके पास जाया करते थे। महाराणा भी यथावकाश महर्षि के पास उपदेश सुनने जाते थे। इससे महर्षि के प्रति उनकी श्रद्धा बढ़ती गई और उन्होंने उदयपुर आने के लिये महर्षि से विनयपूर्वक आग्रह किया। इस पर महर्षि ने सूचित किया कि बम्बई से लौटता हुआ मैं उदयपुर अवश्य आऊँगा। अपनी पूर्व प्रतिज्ञा के अनुसार बम्बई से लौटते समय महर्षि का वि.सं. १९३९ के द्वितीय श्रावण (ता. ११ अगस्त ई.सं. १८८२) को उदयपुर में आगमन हुआ। वहाँ सज्जन निवास बाग के नौलक्खा नामक महल में उनका ठहरना हुआ। महाराणा द्वितीय श्रा.कृ. १४ को महर्षि से भेंट करने गये और तत्पश्चात् नियमपूर्वक महर्षि के पास जाया करते थे। महाराणा के सभी सरदार महर्षि के उपदेशों को बड़ी श्रद्धा से सुनते। उन (सरदारों में आसींद) के रावत अर्जुनसिंह, पारसोली के राव रत्नसिंह, शाहपुरे के राजाधिराज नाहरसिंह, शिवगढ़ के महाराज रायसिंह, मामा बख्तावरसिंह, कविराजा श्यामलदास, राय मेहता पन्नालाल, मेहता तख्तसिंह, पुरोहित पद्मनाथ और ढींकड्या जगन्नाथ आदि मुख्य थे।

महर्षि के सारगर्भित उपदेशों का महाराणा के जीवन पर बड़ा प्रभाव पड़ा। महाराणा का पहले से ही संस्कृत की ओर झुकाव तो था और इस सत्समागम से दर्शनशास्त्रों की ओर भी उनका अनुराग बढ़ा। उन्होंने संस्कृत शैली से सब राजकीय कार्यालयों के नाम रक्खे, जैसे महद्राज सभा, शैलकान्तार सम्बन्धिनी सभा, निज सैन्य सभा, शिल्प सभा आदि। महाराणा के हृदय पर महर्षि की विद्वत्ता का सिक्का जम गया था, इसलिए वैशेषिक दर्शन, पातञ्जलयोग सूत्र और मनुस्मृति आदि ग्रन्थों को महर्षि से सुना करते थे। उन (महाराणा) की स्मरण शक्ति इतनी प्रबल थी कि वे एक घण्टे में मनुस्मृति के २२ श्लोकों का आशय याद कर लेते थे। उन्होंने महर्षि से कुछ योग सम्बन्धी क्रियाएँ भी सीखीं, परन्तु फिर बीमार रहने से वे उनमें विशेष उन्नति न कर सके।

महाराणा जवानसिंह के पश्चात् चार पीढ़ी तक बागोर की शाखा से गोद लिये जाकर महाराणा बनाए गए थे और उनमें से किसी के संतति न हुई। इस वर्ष महाराणा सज्जनसिंह की तीसरी महाराणी के, जो ईडर की थी, गर्भस्थिति के चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे, तब प्राचीन रीति के अनुसार गर्भ रक्षार्थ नाना प्रकार के अनुष्ठान, जप, याग आदि होने लगे। महर्षि ने भी यह वृत्तान्त सुना। हवनादि कार्यों में भाग लेने की प्रार्थना पर महर्षि ने भी, जो यज्ञादि के बड़े पक्षपाती थे और दैनिक कृत्यों में हवन को गृहस्थ का मुख्य कर्म समझते थे, वैदिक रीति से यज्ञ करवाया। यज्ञ का फल शुभ हुआ और माघ शु. २ (ता. ९ फरवरी सन् १८८२ ई.) को महाराणा के कुँवर का जन्म हुआ। इस शुभ अवसर पर उक्त महाराणा ने दस लाख रुपये व्यय करना निश्चय किया था, परन्तु इस नवजात राजकुमार का उसी रात्रि को परलोक वास हो गया, जिससे सारा हर्ष शोक में परिणत हो गया, तो भी महाराणा ने राजकुमार की पुण्य स्मृति में एक अच्छी रकम फिरोजपुर के अनाथालय को भेज दी।

महर्षि के सत्संग से महाराणा की दिनचर्या में बड़ा परिवर्तन हुआ और वे प्रत्येक कार्य नियत समय पर करने लगे। लोकोपयोगी कार्यों में प्रतिदिन महाराणा की रुचि बढ़ने लगी। महर्षि ने महाराणा को परामर्श दिया कि क्षत्रियों के लिए पृथक् पाठशाला बनाई जाकर उन्हें शास्त्रोक्त विधि से हर तरह की शिक्षा देने के साथ शास्त्रास्त्र शिक्षा की भी योजना की जाए। महाराणा ने इस बात को स्वीकार किया, किन्तु उनके अस्वस्थ रहने से वह कार्य स्थगित रहा। मेवाड़ में राजकीय भाषा हिन्दी थी, परन्तु उसमें फारसी शब्दों का अधिक प्रयोग होता था। यह देख महर्षि ने महाराणा को राजकीय भाषा में शुद्ध नागरी को स्थान देने और साधारण लोगों के समझ में आ सके, ऐसी भाषा के रखने का आग्रह किया। स्वामीजी का आदेश स्वीकार कर महाराणा ने नागरी लिपि और सरल भाषा में कार्य होने की आज्ञा जारी की। महर्षि ने महाराणा को स्वदेशी वैद्यों द्वारा चिकित्सा कराने और देशी औषधालय जारी करने का भी परामर्श दिया था, परन्तु महाराणा का देहावसान हो जाने से वह कार्य पूरा न हो सका।

महर्षि ने उदयपुर में ही 'सत्यार्थप्रकाश' के द्वितीय संस्करण को समाप्त कर वि.सं. १९३९ भाद्रपद के शुक्ल पक्ष में उसकी भूमिका लिखी और वहीं रहते समय परोपकारिणी सभा की स्थापना कर महाराणा को उसका सभापति नियत किया। महाराणा ने भी उस सभा की सहायता के लिए दस हजार रुपये दिये और उनके सरदारों आदि ने भी इस कार्य में सहयोग दिया, जिससे एक अच्छी रकम एकत्र हो गई। यद्यपि स्वामीजी के शरीर में व्याधि का लेशमात्र भी नहीं था, तो भी उन्होंने शरीर को अनित्य जान अपने संग्रह किये हुए ग्रन्थ, धन और यन्त्रालय आदि को परोपकार में लगाने की आज्ञा देकर उदयपुर में ही उसका स्वीकार पत्र तैयार किया और उसके २३ ट्रस्टियों में महाराणा के अतिरिक्त मेवाड़ से ही सात सदस्य (बेदला के राव तख्तसिंह, देलवाड़े के राज फतहसिंह, आसींद के रावत अर्जुनसिंह, शाहपुरे के राजाधिराज नाहरसिंह, शिवरती के महाराज गजसिंह, कविराजा श्यामलदास और पं. मोहनलाल–विष्णुलाल पांड्या) रक्खे गये। इससे निश्चय होता है कि महाराणा और उसके सरदारों के सम्मिलित होने से आर्यसमाज की अधिकाधिक उन्नति होने का महर्षि को विश्वास था।

महाराणा ने महर्षि से षड्दर्शनों का भाष्य छपवाने का अनुरोध किया और उसके लिए बीस हजार रुपये अपनी ओर

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

से व्यय करने का वचन दिया। फाल्गुन वदि ६ (ता. २७ फरवरी ई.सं. १८८२) को महाराणा से विदा होकर महर्षि शाहपुरा गये। उस अवसर पर महाराणा ने स्वयं उनके पास जाकर बिदायगी के सम्मान रूप दो सहस्र रुपये भेंट किये, परन्तु महर्षि ने उन्हें लेना मंजूर नहीं किया। फिर महाराणा ने वह द्रव्य परोपकारिणी सभा को दे दिया। महर्षि उदयपुर से शाहपुरा और वहाँ से जोधपुर गये, जहाँ उन्होंने प्राचीन वैदिक धर्म की महत्ता बतलाते हुए अन्य प्रचलित धर्मों की कई बातों का खण्डन किया, जिससे वहाँ उनके बहुत से शत्रु हो गये। अन्त में कुछ दुष्टों ने चिढ़कर उनके आहार में विष मिला दिया, जिसके प्रभाव से कई दिन पीड़ित रहकर वि.सं. १९४० कार्तिक वदि ३० (ता. ३० अक्टूबर ई.स. १८८३) को अजमेर में उनका निर्वाण हुआ।

महर्षि के बीमार होने की सूचना पाते ही महाराणा ने पं. मोहनलाल-विष्णुलाल पंड्या को यह आदेश देकर उनके पास भेजा कि यदि महर्षि के निर्वाण की संभावना हो, तो ऐसा प्रबन्ध करना कि मैं भी उनके अंतिम दर्शन कर सकूं, परन्तु समय थोड़ा रह जाने से महाराणा की यह अभिलाषा पूरी न हो सकी।

महाराणा ने महर्षि के निर्वाण का संवाद सुना, तब वे शोक सागर में डूब गये और उन्होंने उसी समय निम्नलिखित छन्द रचकर महर्षि के प्रति अपूर्व श्रद्धा के साथ शोकोद्‌गार प्रकट किया-

दोहा

नभ-चव-ग्रह-ससि दीप-दिन, दयानंद सह सत्त्व।
वय श्रेसठ वत्सर बिचै, पायो तन पंचत्व।।

कवित्त

जाके जहि-जोर तें प्रपंच फ़िलासिफ़न को,
अस्त सो समस्त आर्य्य-मंडल में मान्यो मैं।
वेद के विरुद्धी मत-मत के कुबुद्धि मंद,
भद्र-भद्र आदिन पै सिंह अनुमान्यो मैं।।
ज्ञाता षट्‌ग्रंथन को वेद को प्रणेता जेता,
आर्य-विद्या-अर्क हू को अस्ताचल जान्यो मैं।
स्वामी दयानंदजू के विष्णु-पद प्राप्त हू तें,
पारिजात को सो आज पतन प्रमान्यो मैं।

देश का दुर्भाग्य है कि महाराणा सज्जनसिंह भी अधिक न जिये और वि.सं. १९४१ पौष सुदि ६ (ता. २३ दिसम्बर ई.स. १८८४) को इस असार संसार से विदा हो गये। यदि वह कुछ वर्ष और जीवित रहते, तो आर्यसमाज का इतिहास किसी अन्य रूप में लिखा जाता।

पुण्य-भूमि मेवाड़ के प्रति महर्षि की अपूर्व श्रद्धा थी और चित्तौड़ को वे हिन्दू जाति का पवित्र तीर्थ समझते थे। चित्तौड़ में रहते समय उन्होंने अपने शिष्यों से कहा था कि भारत में गुरुकुल के योग्य यदि कोई स्थल है, तो वह चित्तौड़ ही है, अतएव चित्तौड़ में गुरुकुल बनाने का प्रयत्न करना आवश्यक है। प्रसन्नता का विषय है कि अब कुछ वर्ष पूर्व महर्षि की यह आकांक्षा सफल होकर चित्तौड़ में गुरुकुल स्थापित हुआ है।

महर्षि के प्रयत्न से हिन्दू समाज के विचारों में बहुत कुछ परिवर्तन हुआ, अनेक नगरों में आर्यसमाज स्थापित हुए और लोगों में नवीन विचार तथा जागृति उत्पन्न हुई। जो लोग हिन्दू धर्म को छोड़कर अन्य धर्मावलम्बी बनते थे, उन्हें रोकने, और जो अन्य धर्म ग्रहण कर चुके थे, उन्हें पुनः शुद्ध कर वैदिक धर्म में मिलाने के लिए शुद्धि का आयोजन किया गया। महर्षि ने अपने उपदेशों के समस्त ग्रन्थ हिन्दी भाषा में प्रकाशित किये, जिससे हिन्दी की बहुत कुछ उन्नति हुई। पंजाब जैसे देश में, जहाँ हिन्दी भाषा का कुछ भी प्रचार न था, आर्यसमाज के अनवरत परिश्रम के फलस्वरूप हिन्दी का यथेष्ट प्रचार हुआ और हो रहा है। महर्षि के उपदेश से वैदिक धर्म की जागृति हुई, इतना ही नहीं, किन्तु हिन्दू जाति में समाज सुधार का काम चल निकला। कई स्थानों पर कन्या पाठशालाएँ खुलीं। जालंधर के कन्या महाविद्यालय में सैकड़ों बालिकाएँ हिन्दी के साथ उच्चकोटि की शिक्षा पा रही हैं। उनके सदुपदेशों के कारण स्थान-स्थान पर गुरुकुल खुले, जहाँ अनेक विद्यार्थी संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी आदि में उच्च कोटि की शिक्षा प्राप्त कर अनेक लोकोपयोगी कार्यों में भाग ले रहे हैं। सारे भारत में इस समय जो जागृति देख पड़ती है, उसका मुख्य कारण महर्षि के उपदेश ही हैं।

इन पंक्तियों के लेखक को बंबई में रहते समय सन् १८८१ ई. के दिसम्बर से सन् १८८२ ई. के मई मास तक महर्षि के अनेक व्याख्यान सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ और उसका बहुत-कुछ प्रभाव उसके चित्त पर पड़ा। अतएव दयानन्द निर्वाण अर्द्धशताब्दी के सुअवसर पर उक्त आदरणीय महापुरुष, आदर्श विद्वान्, अपूर्व वेदज्ञ, निर्भीक धर्मप्रवर्त्तक, सच्चे समाज सुधारक, आर्य संस्कृति के सर्वश्रेष्ठ पुरस्कर्ता, विश्वप्रेमी महर्षि दयानन्द सरस्वती के चिरस्मरणीय जीवन कार्य की स्मृति में लेखक की यह लेख रूप श्रद्धाञ्जलि अर्पित है।

-अजमेर।

मनुष्यों को उचित है कि जैसे विद्वान् लोग ईश्वर, प्राण और बिजुली के गुणों को जान उपासना वा कार्य्यसिद्धि करते हैं, वैसे ही उनको जानकर उपासना और अपने प्रयोजनों को सदा सिद्ध करते रहें।-**महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद भावार्थ-४.३२।**

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल का वैदिक अनुशीलन

-डॉ. सुजाता वीरेश

गताङ्क का शेष.............

'यास्क' ने उस महादेव का यज्ञ से तात्पर्य लिया है। इस दृष्टि से वासुदेव जी का चिन्तन यास्क से भिन्न है। यह उनका मौलिक दृष्टिकोण है जो तार्किक है।

वेद विद्या में भी मौलिक प्रतीकों पर उनका मौलिक दृष्टिकोण दिखाई देता है। इन्द्र, सोम, अश्व आदि विषयों पर उनकी मौलिक व्याख्या है।

३. विजन इन लांग डार्कनेस-दीर्घतमस् ऋषि के अस्यवामीय सूक्त ऋग्वेद के बावन मन्त्रों की व्याख्या है। इस अनुवाद में बिम्ब और प्रतीकों की चित्र सहित व्याख्या की गई है। इसमें वेद में आये प्रतीकों की आधुनिक विज्ञान में प्राप्त उपलब्धियों के साथ जोड़ते हुए उसकी व्याख्या की गई है। उनका स्वयं का दृष्टिकोण जो वैदिक काल को आधुनिक काल के साथ जोड़ देता है। उनकी व्याख्याओं को और भी अधिक प्रभावशाली और आकर्षक बना देता है।

४. हिम ऑफ क्रियशन-ऋग्वेद के दशममण्डल का एक सौ उन्तीसवां सूक्त नासदीय सूक्त की व्याख्या है। सूक्त में वर्णित सृष्टि विद्या से सम्बन्धित विचार है।

५. वैदिक लैक्चर्स-उन्नीस सौ साठ ईसवी में बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय के प्रांगण में वेद व्याख्यान माला का आयोजन मई-जून के माह में किया गया जिसमें देश के अनेक वैदिक विद्वानों को आमन्त्रित किया गया। यहाँ दिए व्याख्यानों को बाद में वैदिक लैक्चर्स के नाम से प्रकाशित किया गया। इसमें भी वैदिक प्रतीकों पर वासुदेव जी का मौलिक दृष्टिकोण है।

६. पृथ्वी सूक्त एक अध्ययन-प्रस्तुत निबन्ध अथर्ववेद के पृथिवी सूक्त पर आधारित है। इसमें मात्र भूमि के प्रति लेखक का प्रेम दृष्टिगत होता है।

७. उपनिषद नवनीत-लेखक का उपनिषद .... गुजराती अनुवाद पुस्तक में उपलब्ध है। उन्होंने माण्डूक्यामुंडक, तैतरीय, छान्दोग्य श्वेता श्वतर, वृहदारण्यक ऐतरेय, ईश, केन, प्रश्न आदि पर भी वैदिक विचारधारा युक्त तर्कसंगत मौलिक अभिव्यक्ति दी है। उन्होंने वेद, उपनिषद और गीता को परस्पर जोड़ते हुए गीता के लिए उपनिषद् का ज्ञान और उपनिषद के लिए वेद तक पहुँचना आवश्यक बताया है। बिना वेद ज्ञान के उपनिषद और गीता का सार अधूरा है। साप्ताहिक हिन्दुस्तान के १९ अप्रैल १९६४ के अंक में पृष्ठ ६ पर ईषोपनिषद की व्याख्या में डॉ. अग्रवाल ने लिखा है "वेद और उपनिषद में इदम् सर्वम-शब्द विश्व के लिए प्रयुक्त हुआ है। उस विश्व के मध्य बिन्दु में ईश्वर की सत्ता है। इसे आगे चलकर गीताकार ने गीता में इस प्रकार कहा है-ईश्वर: सर्वभूताना ह्ृददेश अर्जुन तिष्ठति" इस प्रकार वह वेद उपनिषद के और उपनिषद् गीता के उपजीत्य हैं ऐसा मानते थे। वासुदेव जी ने इन सभी उपनिषद् की सारगर्भित व्याख्या की है।

वासुदेव जी का ज्ञान बहुत ही व्यापक है विषय की विविधता, विषय चयन, विचारों की मौलिक बुद्धि की तार्किकता, राष्ट के प्रति प्रेम, संस्कृति के प्रति सम्मान, इतिहास का सत्यशोधन, कलाकृतियों का इतिहास, काव्य की मीमांसा, निबन्ध साहित्य का लेखन और अनेक गौरवशाली कार्य, अभिनन्दन ग्रन्थ वासुदेव जी द्वारा सम्पादित किए गए।

किन्तु उनका वेदों के प्रति आस्था और स्नेह देखते ही बनता है। अथर्ववेद के पृथिवी सूक्त 'माताभूमि पुत्रोडहम पृथिव्या' को अपने जीवन में व्यावहारिक रूप में ग्रहण करते हुए उन्होंने अपना सर्वसय जीवन को व्यावहारिक रूप में ग्रहण किया। वैदिक ऋषियों का प्रभाव उनके सम्पूर्ण जीवन में परिलक्षित होता है। ऋषि की भाँति उन्होंने अपना जीवन सादगी और आत्मा प्रदर्शन, दम्भ आदि से दूर होकर व्यतीत किया वह वैदिक सन्ध्या, दैनिक हवन, वैदिक रीति से समस्त संस्कार करते और करवाते थे।

वासुदेव जी यद्यपि पहले से ही वैदिक विचार धारा से प्रेरित थे। तथापि उनकी मित्र मण्डली के एक विद्वान् श्री .... दत्त शुक्ल भी थे जिन्हें उन्होंने अपना वेद-गुरु होने की संज्ञा दी है। उन्हीं के साथ मिलकर वासुदेव जी ने अपना एक वैदिक केन्द्र बनाया। उनके साथ मिलकर 'पैप्लादिसंहिता' गायत्री उपनिषद् जैसी पुस्तकें प्रकाशित की।

वासुदेव जी के वैदिक चिन्तन में मौलिकता थी उन्होंने अनुवाद में भी इस विशेषता को बनाए रखा है। उन्होंने जीवन के प्रत्येक कार्य-कलाप को वेदों से जोड़कर देखा। वेद की बात प्रमाणिक मानते हुए उन्होंने अपना सम्पूर्ण सृजन किया और आधार बनाया।

क्षेमचन्द्र शुक्ल ने नरेश कुमार लिखित वासुदेव शरण अग्रवाल व्यक्तित्व एवं कतित्व के उन्मुक्त अभिनन्दन में लिखा है-'वासुदेव शरण वैदिक वाङ्मय के तलस्पर्शी विद्वान् थे।'

उन्होंने वैदिक दर्शन अपनी ही दृष्टि से किया है। डॉ. अग्रवाल ने वैदिक निबन्ध साहित्य, प्रतिकात्मक व्याख्याएँ लिखकर स्वयं को वैदिक व्याख्याता के रूप में प्रतिष्ठापित किया है।

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

वह ज्यों-ज्यों इसकी खान में घुसते चले गये त्यों-त्यों उनकी वेदों के प्रति आस्था अगाध होती चली गई। वेद प्राणी मात्र के आधारभूत ग्रन्थ है।

दयानन्द द्वारा दिया गया आर्यसमाज का नियम 'वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है' वेद का पढ़ना-पढ़ाना, सुनना-सुनाना सब आर्यों (श्रेष्ठ पुरुषों) का परम धर्म है, के अनुसार उन्होंने वेदों को पढ़ा, खंगाला और उसके साहित्य को हिन्दी के पाठकों के समक्ष सरलतम भाषा में रखा। निसन्देह वासुदेव जी का वैदिक चिन्तन प्रशंसनीय है।

-प्रवक्ता (हिन्दी), राजकीय कन्या इन्टर कॉलेज, करहल, मैनपुरी, उ.प्र.
चलभाष-७८३०७०३६३६

कृपया "परोपकारी" पाक्षिक शुल्क, अन्य दान व वैदिक-पुस्तकालय के भुगतान इलेक्ट्रॉनिक मनीऑर्डर से ना भेजें

निवेदन है कि ई.एम.ओ. द्वारा "परोपकारी" शुल्क, अन्य दान व वैदिक पुस्तकालय के पुस्तकों के भुगतान भेजने का कष्ट न करें, क्योंकि इस फार्म में न तो ग्राहक संख्या का उल्लेख होता है और न ही पैसे भेजने के उद्देश्य का। सभा कर्मचारी उचित खाता शीर्ष में राशि नहीं जमा कर पाते हैं क्योंकि पैसे भिजवाने का उद्देश्य ज्ञात नहीं हो पाता है। इस मनीऑर्डर फार्म में संदेश का स्थान रिक्त रहता है। कृपया साधारण एम.ओ. द्वारा ही राशि भिजवाने का कष्ट करें तथा फार्म में संलग्न समाचार वाली स्लिप पर ग्राहक संख्या, दान सम्बन्धी सूचना व पुस्तकों के विवरण का अवश्य उल्लेख करें। **यदि ई.एम.ओ. से भेजना है तो संपूर्ण स्पष्ट विवरण लिखा पत्र भी अलग से अवश्य प्रेषित करें।** **-व्यवस्थापक**

ई-मेल द्वारा परोपकारी निःशुल्क

परोपकारी के पाठकों को प्रसन्नता होगी कि अब परोपकारी ई-मेल द्वारा भी भेजी जा रही है। परोपकारिणी सभा की वेब-साइट पर तो परोपकारी पहले से ही निःशुल्क उपलब्ध है। विश्व में कहीं भी कोई भी इसे वेब-साइट पर पढ़ सकता है। इसके साथ ही अब यह सुविधा भी उपलब्ध कराई गई है कि परोपकारी आपके पास ई-मेल द्वारा पहुँच जाये। इससे यह पत्रिका शीघ्र व अधिक सुन्दर रूप में आप तक पहुँच सकेगी। आप जहां भी रहें, कभी भी पढ़ना चाहें, यह आपके पास रहेगी। डाक की अव्यवस्था से छुटकारा मिल सकेगा। यह आपको नियमित मिलती रहेगी। इससे रासायनिक रंगों व कागज का उपयोग भी कम होगा, खर्च भी घटेगा। अतः पाठकों से अनुरोध है कि **कृपया अपना ई-मेल पता सभा को ई-मेल से भिजवा देवें।** आप जिन इष्ट-मित्रों, परिजनों व संस्थाओं को परोपकारी भिजवाना चाहते हैं, उनके ई-मेल पते भी भिजवा देवें, उन्हें भी यह निःशुल्क भेज दी जायेगी। ई-मेल-psabhaa@gmail.com **-व्यवस्थापक**

वैदिक विद्वान् आश्रय केन्द्र प्रारम्भ

आर्यसमाज, अलीगढ़ (उ.प्र.)-नवसम्वत्सर एवं आर्यसमाज स्थापना दिवस के उपलक्ष में आर्यसमाज, महर्षि दयानन्द मार्ग (अचल मार्ग) में आयोजित समारोह में दिनांक ११ अप्रैल को उपस्थित भारी जन समूह के मध्य संस्था मन्त्री राजेन्द्र पथिक द्वारा निराश्रित वेद-विद्वानों, प्रचारकों एवं भजनोपदेशकों, जो वयोवृद्ध हों, उनके आवास एवं भोजन की स्थायी व्यवस्था "आर्यसमाज, अलीगढ़" द्वारा की गई है। सम्बन्धित वयोवृद्ध विद्वान् भारत के किसी भी क्षेत्र के निवासी हों, सभी आमन्त्रित हैं। **-राजेन्द्र पथिक, मन्त्री, आर्यसमाज महर्षि दयानन्द मार्ग, अलीगढ़, चलभाष-९४१२६७१५५४**

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

प्रामाणिक-व्यवहार

–नारायण प्रसाद 'बेताब'

पं. नारायण प्रसाद 'बेताब' का परिचय–आर्यजगत् में प्राय: सभी ने परमात्मा के यथार्थ स्वरूप को दर्शाने वाली यह विनय-प्रार्थना अवश्य सुनी होगी-

अजब हैरान हूँ भगवन् तुम्हें क्यों कर रिझाऊँ मैं?
नहीं वस्तु कोई ऐसी जिसे सेवा में लाऊँ मैं।।

परन्तु बहुत कम पाठकों को यह पता होगा कि यह भावपूर्ण एवं चिरंजीवी भजन तत्कालीन पारसी थिएटर के लिए लिखे गए एक नाटक-'महाभारत' का अंश है और उसी में प्रथम बार (१९१३ ई. में) गाया भी गया था। आर्य सिद्धान्तों को प्रदर्शित करने वाले इस भजन के रचयिता थे प्रख्यात नाटककार, कवि एवं ऋषि-भक्त पंडित नारायण प्रसाद 'बेताब'।

एक समय में पारसी थिएटरों के नाटकों में धूम मचा देने वाली 'त्रिमूर्ति' के लेखकों में से एक थे पं. 'बेताब' जी। पं. बेताब जी को आजीविका के लिए यद्यपि नाटक-लेखन को अपना व्यवसाय चुनना पड़ा और उस क्षेत्र में उन्होंने पर्याप्त ख्याति भी अर्जित की, पारसी रंगमंच के लिए नाटक लिखते हुए भी उन्होंने यथासंभव आर्य सिद्धान्तों को उनमें पिरोने का सफल प्रयास किया। विधवा विवाह समर्थन, जन्मना जाति-प्रथा का खण्डन, गुरुकुलीय शिक्षा पद्धति का प्रचार इत्यादि वैदिक सिद्धान्तों का समर्थन उनके नाटकों में मिलता है, यह उनकी सिद्धान्त प्रियता ही थी। यद्यपि वे नाटक-कम्पनियों के मालिकों के निर्देशानुसार ही नाटक लिखते थे।

उन्होंने विपुल साहित्य की रचना की, जिसमें आर्य सिद्धान्तों पर भी कुछ पुस्तकें हैं-संस्कार संगीत, राधाकृष्ण का नाता, अमृतांजलि, पदार्थविद्या, दर्शन-दिग्दर्शन, शास्त्रार्थ-शब्दकोश इत्यादि। गुरुवर विरजानन्द जी तथा महर्षि दयानन्द पर भी उन्होंने कुछ काव्य रचनाएँ (मुसद्दस) उर्दू में लिखीं। स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की एक मुसलमान द्वारा हत्या किए जाने पर उन्होंने '**पिस्तौल का पश्चात्ताप**' नामक एक लम्बा भावपूर्ण मुसद्दस लिखा। इन सब रचनाओं में भाव-प्रणवता और भाषा-प्रवाह अतीव पठनीय हैं। पं. रामचन्द्र देहलवी ने उनके बारे में लिखा-''पं. जी अच्छे दोस्त तथा ऊँचे दर्जे के शायर थे। कविताएँ बनाना उनके बाएँ हाथ का खेल था।.........उन्हें शास्त्रार्थ सुनने का इतना शौक था कि अनेक स्थानों पर मेरे साथ इसीलिए जाते थे। शास्त्रार्थों में उनका साथ मेरे लिए उत्साह और उमंग-वृद्धि का साधन सिद्ध हुआ था।''

उर्दू-हिंदी के समर्थ लेखक एवं दोनों भाषाओं के काव्य विधान के उत्कृष्ट ज्ञाता पं. बेताब जी को हिन्दी साहित्य प्रेमियों और आर्यसमाज ने भुला सा दिया है, परन्तु पिछले दिनों पुन: प्रकाशित हुए उनके आत्मचरित-'बेताब चरित' नामक ग्रंथ ने उनकी स्मृतियों को हमारे सम्मुख सजीव कर दिया है। यों तो सम्पूर्ण 'बेताब चरित' एक पठनीय पुस्तक है-भाषा शैली एवं विषय-वस्तु की दृष्टि से पूर्णतया अनूठी, परन्तु उन पर आर्य सिद्धान्तों की कैसी गहन छाप थी और अपनी व्यवसायगत बाध्यताओं एवं परिस्थितियों के कारण उनसे जो यत्किंचित् असद् आचरण हुए थे, और जिसके लिए उनके मन में जो क्लेश था, उसके निवारण एवं उन असद् आचरणों की पुनरावृत्ति न हो, इसके लिए उन्होंने जिस आर्ष पद्धति का सहारा लिया, वह क्रमश: 'परोपकारी' के माध्यम से उन्हीं के शब्दों में वर्णित है। कुछ अन्य विशिष्ट घटनाएँ भी 'परोपकारी' के गताङ्क से पाठकों के सम्मुख क्रमश: प्रस्तुत की जा रही हैं।

–सम्पादक

दो मुद्दती हुण्डियाँ जो मेरे पास पड़ी थीं, उनकी मुद्दत पक गई। जमादार साहब की नाटक कम्पनी जो लुधियाने पहुँची, वहाँ उसने रूप सुन्दरी नाम का खेल तैयार किया। उसके मुसन्निफ़ साहिब अपनी खानगी जरूरत से रुखसत पर गए हुए थे। नाटक में कुछ दृश्य न्यूनाधिक करने की आवश्यकता हो गई। वहीं कम्पनी की ज़रूरत और मेरी क़िस्मत ने मैनेजर के कान में कुछ कह दिया। उसका फल यह हुआ कि देहली मेरे नाम एक 'प्राइवेट लेटर' मैनेजर कम्पनी की तरफ से आया कि ''तुम कम्पनी में नौकरी कर सको तो हम लेने को तैयार हैं।''

ऐसे स्थान को मैं जीवन-पथ का दुराहा कहता हूँ। यहीं से मार्ग के दो रास्ते निकलते हैं। चलने वाला स्वतन्त्र है, चाहे जिस पर चले। एक रास्ते के आरम्भ में थोड़ी दूर तक मनोहर हरियाली और सुगन्धित पुष्प दिखाई देते हैं, परन्तु आगे चलकर काँटे। दूसरे मार्ग में थोड़ी दूर तक गढ़े, कंकर-पत्थर और काँटे से प्रतीत होते हैं, परन्तु आगे चलकर सुन्दर सुमन समूह। अनुकूल भाग्य ने इसी विपरीत-दर्शन मार्ग की प्रशंसा करके इसी तरफ़ चलने की सलाह दी। मैंने उत्तर में लिख दिया कि ''मेरे स्वामी लालाजी आज्ञा देंगे तो आ सकूँगा। आप सीधे लालाजी के नाम लिखिए।'' आप अनुमान कीजिए कि मेरे उस उत्तर ने उनके

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

दिल पर क्या असर किया होगा जो भविष्य में मेरे लालाजी बनने वाले थे। क्या इतनी वफादारी नमूने के लिए काफी नहीं है? लालाजी के नाम जमादार साहिब का खत आ गया कि "आपके प्रेस में जो नारायण प्रसाद नाम का कम्पोजीटर है, उसे हमें दे दीजिए।" अर्थात् मुझे लालाजी से माँग लिया।

माँग लेने या उड़ा लेने में क्या अन्तर है? वही, जो विवाहिता-विनोद और व्यभिचार में। क्रिया और क्रिया का फल दोनों में समान है परन्तु एक के पीछे स्वर्ग है और दूसरे के पीछे नरक।

लालाजी ने मुझे बुलाकर पूछा, "कम्पनी में जाओगे?" मैंने कहा, "आप आज्ञा देंगे तो चला जाऊँगा।" समझाने लगे कि "प्रेस में बहुत ही तरक्की होगी तो बरसों बाद पन्द्रह रुपए मासिक होंगे। कम्पनी में हम अभी बीस-पच्चीस रुपए माहवार मुकर्रर करा देंगे।" मेरी खामोश मंजूरी लेकर लालाजी ने ऐसा उत्तर लिखा जैसा कि दुकानदार सौदे का मोल उस समय कहते हैं, जिस समय सौदा बेचना मंजूर नहीं होता और नीयत यह होती है कि दूने दाम मिलेंगे तो दे भी देंगे। बढ़ाते-बढ़ाते इतने बढ़ा दिए कि आगे बढ़ने की गुंजाइश न रही। लिख दिया कि '३० रुपए माहवार तनख्वाह दो तो लड़के को भेज सकते हैं।' उन्होंने मंजूर कर लिया और इन्होंने बड़े प्रेम और प्यार से अपनी मझोली में रेलवे स्टेशन तक पहुँचा दिया। लालाजी की मझोली (अमीरी की शान, आजकल की मोटरों से अधिक प्रतिष्ठित), दो-चार कर्मचारियों की सहानुभूति, दरिद्र नारायण की इस दबदबे से विदा, मेरे दिल में घर कर गई और मालूम हुआ कि मैनेजर के खत पर फूल कर, भूल कर, चुपचाप प्रेस को छोड़ जाते तो यह इज़्ज़त नसीब न होती। बस यहीं से प्रामाणिक पन का झल्ला पकड़ लिया और पकड़ा भी ऐसा मज़बूत कि छोड़ने का काम नहीं। ईश्वर करे कि ज़िन्दगी भर न छूटे। **-बेताब चरित 'मंजिल-१५'**

१० आदतें जो पहुँचाती हैं दिमाग को नुकसान

०१. नाश्ता नहीं करना-जो लोग नाश्ता नहीं करते उनका ब्लड शुगर केवल काफी कम हो जाता है। इससे दिमाग तक पोषक तत्वों की सही आपूर्ति नहीं हो पाने से ब्रेन डी जनरेशन की समस्या होती है।

०२. जरूरत से ज्यादा प्रतिक्रिया-किसी भी परिस्थिति में जरूरत से ज्यादा प्रतिक्रिया और क्रोध करने से दिमाग की नसें सख्त हो जाती हैं। इससे हमारी मानसिक शक्ति कमजोर हो जाती है।

०३. धूम्रपान-ऐसा करने से दिमाग कई जगह से सिकुड़ने लगता है। इससे अल्जाइमर्स की शिकायत हो सकती है।

०४. शक्कर का अधिक सेवन-अधिक मात्रा में मीठा खाने से प्रोटीन और अन्य पोषक तत्वों को अब्जॉर्ब करने में मुश्किल होती है। इससे दिमाग के विकास में भी बाधा होती है।

०५. वायु प्रदूषण-दिमाग हमारे शरीर में वायु का सबसे बड़ा उपभोक्ता होता है। प्रदूषित वायु को सांस के जरिये लेने से दिमाग में ऑक्सीजन आपूर्ति कम हो जाती है। इससे दिमाग की क्षमता कम हो जाती है।

०६. नींद की कमी-नींद हमारे दिमाग को आराम करने का मौका देती है। लम्बे समय तक पूरी नींद न ले पाने से दिमाग की कोशिकाएँ मर सकती हैं।

०७. सोते वक्त सिर ढंकना-सोते वक्त सिर को ढंकने से कार्बन-डाई-ऑक्साइड की मात्रा ज्यादा और ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है। इससे दिमाग को क्षति पहुँच सकती है।

०८. बीमारी के समय काम-अस्वस्थ होते हुए काम या पढ़ाई करने से दिमाग की कोशिकाओं पर प्रभाव पड़ता है। साथ ही उसकी क्षमता भी कम हो जाती है।

०९. कम बोलना-बौद्धिक बातों पर चर्चा करने से दिमाग की क्षमता बढ़ती है।

१०. विचारोत्तेजना की कमी-दिमाग को प्रशिक्षित करने का सबसे अच्छा तरीका विचार होते हैं। इस तरह के विचारों की कमी से दिमाग सिकुड़ने लगता है।

सौजन्य-दैनिक भास्कर, दिनांक १९.०१.२०१३

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

ऋषि दयानन्द विष प्रकरण पर मेरे संस्मरण

-ओममुनि

महर्षि दयानन्द जी को जोधपुर में षडयन्त्रपूर्वक विष दिया गया और चिकित्सा भी योग्य चिकित्सकों द्वारा नहीं कराई गई जिससे महर्षि का अजमेर में देहान्त हुआ। महर्षि जोधपुर राजघराने के अतिथि थे, उनके अतिथि को उन्हीं के राज्य में विष दे देना जोधपुर राजपरिवार के लिए कलंक की बात रही। इस कलंक को दूर करने के लिए राजपरिवार प्रारम्भ से ही प्रयत्न करता रहा है, किन्तु सत्य इतिहास को राजपरिवार बदल न पाया।

सन् १९८४ के जून मास की बात है। आर्यवीर दल का एक शिविर आबू-पर्वत पर लगा था। उस समय आबूपर्वत पर आर्यसमाज का भवन नहीं था और न ही गुरुकुल की स्थापना हुई थी। उन दिनों वहाँ स्वामी धर्मानन्द जी (पूर्व नाम कपिल देव) आबूपर्वत पर ही एक कुटिया बनाकर रहते थे। उनके मन में विचार आया कि आबू पर्वत पर आर्यवीर दल का शिविर लगाया जाये और शिविर लगा। शिविर में राजस्थान के सैकड़ों आर्यवीरों ने भाग लिया था। शिविर एक मास रहा था।

उन दिनों मैं आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान का मन्त्री होता था। उस शिविर के समापन अवसर पर मैं और अजमेर जिले से सांसद आचार्य भगवान देव आबू पर्वत गये थे। उस समापन समारोह में जोधपुर की राजमाता कृष्णा कुमारी जी भी पधारी थी। मंच पर बैठे हुए मैंने राजमाता जी से चर्चा में कहा कि जोधपुर राजघराने का सम्बन्ध आर्यसमाज से बहुत पुराना रहा है। स्वामी दयानन्द तो जोधपुर राजपरिवार के अतिथि के रूप में कई मास जोधपुर में रहे थे। वहीं उनको विष भी दिया गया था। आप कृपा करके आबू पर्वत पर आर्यसमाज मन्दिर बनवाने हेतु थोड़ी-सी भूमि दे दें या कोई बना-बनाया छोटा सा मकान दे दें तो बड़ी कृपा होगी। आचार्य भगवान देव जी ने भी इस बात के लिए राजमाता जी से आग्रह किया।

राजमाता ने यह सब सुन मुझे व आचार्य भगवान देव जी को आबू पर्वत पर अपनी कोठी दिखाने अपनी गाड़ी से ले चलीं। मार्ग में राजमाता जी ने हमसे कहा कि यदि आप जोधपुर में स्वामी दयानन्द को जहर दिया जिससे स्वामी जी की मृत्यु हो गई। इस कलंक को यदि पुस्तकों में से हटवा दें तो मैं आपको मेरी इस कोठी में से आर्यसमाज निर्माण हेतु बड़ी जगह दे दूँगी। इस बात को सुनकर मैंने व आचार्य भगवान देव ने राजमाता जी से निवेदन किया कि इतिहास इस प्रकार से कोई बदल नहीं सकता। यह सत्य है कि स्वामी जी को जोधपुर में जहर दिया गया व उसी जहर के कारण उनकी मृत्यु हुई।

दूसरा-जोधपुर निवासी विजय सिंह भाटी की धर्मपत्नी श्रीमती चन्द्रकान्ता ने सुनाया कि स्मृति भवन का कार्यक्रम चल रहा था। उसमें जोधपुर की राजमाता भी थी। कुंवर भूपेन्द्र जी मञ्च पर अपना कार्यक्रम दे रहे थे। उसमें उन्होंने जब यह कहा कि यह-वह स्थान है जहाँ पर ऋषि दयानन्द को विष दिया गया था, उसी से ऋषि की मृत्यु हुई जब राजमाता ने खड़े होकर भूपेन्द्र जी का कार्यक्रम रोक दिया और कहा इसमें हमारे राजघराने का कोई हाथ नहीं था। इतिहास जो है सो है ही राजमाता के मना करने से क्या होता है। **-ऋषि उद्यान, अजमेर।**

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हो। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

प्रभु किनका रक्षण करते हैं?

-महात्मा चैतन्यमुनि

**ओ३म् त्वमाविथ सुश्रवसं तवोतिभिस्तव त्रामभिरिन्द्र तुर्वयाणम्।
त्वमस्मै कुत्समतिथिग्वमायुं महे राज्ञे यूने अरन्धनाय:।।**

(ऋ०१-५४-१०)

हे इन्द्र ! (**त्वम्**) आप (**सुश्रवसम्**) उत्तम-ज्ञानी को अथवा आपकी प्रेरणा को सुनने वाले को, (**तुर्वयाणम्**) हिंसक कामादि वासनाओं पर आक्रमण करने वाले अर्थात् इन पर विजय करने वाले को, (**कुत्सम्**) सब दोषों का संहार करने वाले, (**अतिथिग्वम्**) अतिथियों के प्रति आदर-भाव से जाने वाले, (**आयुम्**) गतिशील पुरुष को (**तव ऊतिभि:**) अपनी रक्षण-प्रक्रियाओं से, (**तव त्रामभि:**) अपने रक्षण-साधनों से (**आविथ**) रक्षित करते हो।

इस मन्त्र में बताया गया है कि परमात्मा किसकी रक्षा करते हैं। परमात्मा अत्यन्त कृपालु है, न केवल हमारा पालन करने वाले हैं बल्कि संकट में हमारी रक्षा करने वाले भी वही हैं। उनकी कृपा तो सदा-सर्वदा सब पर बरस ही रही है, मगर उनकी कृपा का पात्र बनने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को पूरे मन से प्रयास करना चाहिए। इस मन्त्र में बताया गया है कि परमात्मा की कृपा का पात्र वह व्यक्ति बनता है जो (**सुश्रवसम्**) उत्तम-ज्ञानी होकर परमात्मा की प्रेरणाओं को निरन्तर सुनने वाला हो। आमतौर पर लोग यही प्रश्न करते हैं कि परमात्मा किसी को पाप करने से उसी समय क्यों नहीं रोक देता जिस समय वह व्यक्ति पाप करने को उद्यत् होता है? वास्तविकता यह है कि वह परम कृपालु पापियों को पाप करने से रोकता तो है मगर पाप के वशीभूत होने के कारण वह परमात्मा की उस आवाज को अनसुना कर देता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी कहते हैं कि जब भी कोई व्यक्ति बुरा कर्म करने लगता है तो भीतर से भय, शंका और लज्जा के भाव पैदा होते हैं तथा जब कोई व्यक्ति अच्छा कार्य करने लगता है तो भीतर से उत्साह, उमंग एवं प्रसन्नता के भाव पैदा होते हैं। महर्षि के अनुसार यही परमात्मा का आत्मा को दिशा-निर्देश है मगर व्यक्ति इसे सुन नहीं पाता इसीलिए वह पाप-कर्म कर बैठता है। ऐसे व्यक्ति की भला परमात्मा कैसे रक्षा कर सकते हैं अत: व्यक्ति को जागरूक तथा अपने अन्त:करण की आवाज को सुनने वाला होना चाहिए। आगे कहा (**तुर्वयाणम्**) हिंसक कामादि वासनाओं पर आक्रमण करने वाले अर्थात् इन पर विजय करने वालों की प्रभु रक्षा करते हैं। परमात्मा ने हमें कर्मेन्द्रियाँ, ज्ञानेन्द्रियाँ तथा मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार इसलिए दिए हैं कि हम अपने आन्तरिक शत्रुओं को परास्त करते हुए अपनी जीवन यात्रा को भली प्रकार से पूरी कर सकें मगर हम इन समस्त उपकरणों का गलत उपयोग करके स्वयं ही भटकते रहते हैं। भला ऐसे व्यक्ति की कौन सहायता करेगा जो अपनी सहायता स्वयं करने के लिए तैयार नहीं है अत: हमें इन उपकरणों का सही-सही प्रयोग करके हिंसादि तथा काम-क्रोधादि शत्रुओं पर विजय प्राप्त करनी चाहिए और इस प्रकार (**कुत्सम्**) सब दोषों का संहार करके हम प्रभु कृपा के स्वत: पात्र बन जायेंगे तथा उसके सुरक्षा घेरे में स्वयं को प्रतिष्ठापित कर सकेंगे। वेद मन्त्र आगे एक और महत्वपूर्ण बात कहता है (**अतिथिग्वम्**) कि जो व्यक्ति अतिथियों का आदर-भाव से सेवा करता है वह भी परमात्मा के सुरक्षा कवच में आ जाता है। आगे वेद कहता है (**आयुम्**) अर्थात् परमात्मा उसकी रक्षा करता है जो व्यक्ति गतिशील हो। जीवन के महत्त्व को वही व्यक्ति समझ सकता है जो इस संसार को एक सैरगाह न समझकर बल्कि कर्मक्षेत्र समझे। जीवन का महत्त्व इसी में है कि इस जीवन में कठोर परिश्रम करते हुए निरन्तर पुण्य कर्मों का संचय करते रहें। परमात्मा ने इस भवसागर से तैरकर पार उतरने के लिए हमें बहुत ही सुन्दर नाव दी है मगर यदि हम इसमें आलसी और प्रमादी बनकर अपुण्य-कर्मों रूपी छिद्र करते रहेंगे, तो यह नाव अवश्य ही मंझधार में डूब जायेगी। ऐसे व्यक्ति को कोई भी बचा नहीं सकेगा। इसलिए अपनी इस नौका को पुण्य-कर्मों रूपी प्रसाधनों से सुन्दर और मजबूत बनाना चाहिए। जो व्यक्ति सदा कर्मशील रहता है। उसकी परमात्मा भी सहायता करता है।

वेद में परमात्मा ने तीन अत्यन्त ही महत्वपूर्ण उपदेश दिए हैं। हमें उनका भी दृढ़तापूर्वक अनुपालन करना चाहिए। वे उपदेश इस प्रकार है-

**ओ३म् यथा विप्रस्य मनुषो हविर्भिर्देवां अयजः कविभिः कविः सन्।
एवा होतः सत्यतर त्वमद्याग्ने मन्द्रया जुव्हा यजस्व।।**

(ऋ. १-७७-५)

हम (**विप्रस्य मनुष: यथा**) ज्ञानी मनुष्य की भाँन्ति त्यागपूर्वक भोगों को भोगें, (**देवान् अयज:**) देवों व दिव्य गुणों को अपने साथ संगत करके, यज्ञ-शेष के सेवन से ही दिव्यवृत्तियों का विकास करें तथा (**मन्द्रया जुव्हा**) सदा मधुर व सुखद वाणी ही बोलें।

व्यक्ति को सदा ही हृदय में ऐसा चिन्तन बनाए रखना चाहिए कि संसार में हमें जो कुछ भी प्राप्त हुआ है, वह सब प्रभु की कृपा से ही प्राप्त हुआ है इसलिए हमारी समस्त सम्पदाएँ आदि तथा अपने सम्बन्धी एवं कुटुम्बी जन अन्तत: उस परमात्मा के ही हैं। अत: इन्हें त्यागने के लिए भी सदा-सर्वदा ही उद्यत् रहना चाहिए। निष्काम कर्मी होकर सांसारिक पदार्थों को त्यागमयी भावना से ही भोगना चाहिए। देव-जनों का जैसा पवित्र और यज्ञमयी जीवन रहा है, हमारा जीवन भी उन्हीं भावनाओं से

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

परिपूर्ण होना चाहिए। इसके लिए हमें सदा ही देवजनों की संगती करनी चाहिए। जब उनकी संगती करेंगे तो हमारे भीतर ही उन्हीं के समान दिव्य-गुणों का सृजन हो सकेगा। अपनी वाणी से हम सबके साथ सदा ही मधुरतापूर्ण प्रयोग करें तथा हमारी वाणी सबके लिए सुख देने वाली ही होनी चाहिए। जीवन में वाणी का दुरुपयोग बहुत बार बड़ी-बड़ी मुसीबतें पैदा कर देता है। किसी ने बहुत ही सुन्दर कहा है कि इस वाणी के सदुपयोग से हम शत्रु को भी अपना मित्र बना सकते हैं और इसका दुरुपयोग मित्र को भी पलभर में शत्रु बना देता है। यदि हमारा जीवन इस प्रकार का बनेगा तो परमात्मा की कृपा के पात्र बनेंगे तथा हमें उसका रक्षण स्वत: ही प्राप्त हो सकेगा। वेद में अन्यत्र और भी सुन्दर उपदेश देते हुए कहा गया है-

ओ३म् आ रोदसी बृहती वेविदाना: प्र रुद्रिया जभ्रिरे यज्ञियास:।
विदन्मर्तो नेमधिता चिकित्वानग्निं पदे परमे तस्थिवांसम्।।

(ऋ. १-७२-४)

हम लोग (**रोदसी**) (द्यावापृथिवी) अपने मस्तिष्क और शरीर का समुचित विकास करें, (**रुद्रिया:**) प्राण-साधना द्वारा चित्त-मन को संयमित करें, (**यज्ञियास:**) यज्ञादि कर्मों को निरन्तर करते रहें तथा तदनुसार अपने जीवन को भी यज्ञमयी बनाएँ, (**नेमधिता**) संग्राम के द्वारा (नेम का शब्दार्थ आधा है, संग्राम में सेना दो भागों में बंटी होती है, आधी एक ओर और आधी दूसरी ओर इसलिए 'नेमधित्' संग्राम का नाम है) जीवन में बुराईयों पर विजय प्राप्त करें।

उपरोक्त उपदेशानुसार अपने जीवन को बनाने वाले लोग निश्चित रूप से प्रभु कृपा के पात्र बनते हैं क्योंकि परमात्मा ने हमें कर्म करने की स्वतन्त्रता प्रदान कर रखी है अत: इस स्वतन्त्रता का लाभ अपने जीवन निर्माण करने के लिए करना चाहिए। शरीरानुकूल आहारादि का सेवन करके तथा व्यायाम और योगासनादि करके अपने शरीर को परिपुष्ट बनाना चाहिए। शरीर का स्वस्थ होना अति आवश्यक है क्योंकि यह शरीर ही हमारी सबसे बड़ी पूंजी है। जिस प्रकार सांसारिक वाहनादि हमें हमारी मंजिल तक पहुँचाते हैं उसी प्रकार यह शरीर रूपी रथ ही हमें हमारे समस्त लक्ष्यों को पूरा करने में साधन बनता है। यदि साधन ही गड़बड़ा गया तो साध्य केवल स्वप्न मात्र बनकर ही रह जायेगा। शरीर के साथ-साथ अपने मस्तिष्क को भी अच्छी संगति, स्वाध्याय तथा उपासनादि के द्वारा सबल और निर्मल बनाने की आवश्यकता है। व्यक्ति को किसी प्रकार के भी मादक पदार्थों का कदापि सेवन नहीं करना चाहिए क्योंकि ये सब हमारे मस्तिष्क को विकरित करते हैं। प्राणायाम् के द्वारा अपने शरीर को स्वस्थ, मस्तिष्क को निर्मल तथा अपनी चित्तवृत्तियों को विवेकशील के साथ जोड़ने का प्रयास करना चाहिए। प्राणायाम का अभ्यास निरन्तर करते रहना चाहिए। मानव जीवन एक संघर्ष है और इस संघर्ष में जिसने सफलता प्राप्त कर ली वही दिव्यता को प्राप्त कर लेता है। जिस प्रकार दो सेनाओं में युद्ध होता है ठीक इसी प्रकार हमारे हृदयक्षेत्र में भी देवासुर संग्राम चला रहता है। अच्छाई और बुराई में सदा ही संघर्ष होता रहता है मगर मन में यह विश्वास लेकर जीवन-संघर्ष में लगे रहना चाहिए कि अन्तत: अच्छाई की ही विजय होती है। हमारे आप्तपुरुषों ने कहा है-'सत्यमेव जयते नानृतम्' अर्थात् अच्छाई की, धर्म की और सत्य की सदा ही विजय होती है। अत: आप्तपुरुषों के इस उपदेश को साथ रखते हुए जीवन के किसी भी संघर्ष में कभी भी निराश व हताश नहीं होना चाहिए। व्यक्ति को सदा ही परिस्थितियों का निरीक्षण-परीक्षण करके साहस के साथ आगे बढ़ना चाहिए। हृदय में जो हिंसा व अहिंसा के भाव उठते रहते हैं उन्हें निरीक्षण-परीक्षण के द्वारा अहिंसात्मक बनाने में लगे रहें। बुद्धि के संशयात्मक एवं निर्णयात्मक संघर्ष में निर्णयात्मक बुद्धि को ही प्रश्रय दें। मन के संकल्प-विकल्प रूपी संघर्ष में मन को सदा ही संकल्प के साथ जोड़ें। मन को यदि विकल्प दोगे तो बहुत कठिनाई हो जायेगी। चित्त में जो विवेक और अविवेक का संघर्ष चलता है उस संघर्ष में अपने विवेक को संवृद्ध करें। प्रकृति और पुरुष के चिन्तन रूपी संघर्ष में प्रकृति का निरीक्षण करके आत्म-तत्त्व को ही प्रमुखता देते हुए उस प्रभु के साथ मित्रता स्थापित करें जो हमारा सच्चा रक्षक, बन्धु, बान्धव, माता-पिता, आचार्य तथा गुरु आदि हैं।

-महर्षि दयानन्द धाम, महादेव, सुन्दरनगर, जिला-मण्डी, हि.प्र.-१७४४०१

क्या स्मूदी स्वास्थ्य वर्द्धक है?

प्रिजर्वेटिव रहित फलों से बनी स्मूदी को स्वास्थ्य वर्द्धक पेय पदार्थ माना जाता है। पर एक नए अध्ययन से पता चला है कि स्मूदी उतनी स्वास्थ्य वर्द्धक नहीं होती है जितना उन्हें बताया जाता है क्योंकि इनमें कैलोरी व शर्करा की मात्रा ज्यादा होती है। वैज्ञानिकों ने फ्रूट स्मूदी के ५२ ब्रांडों की जांच की और पाया कि इनमें से २४ में प्रति २५० मिली. में ३० ग्राम या उससे अधिक शर्करा थी। पांच में से चार ब्रांड ऐसे थे जिनमें कोकाकोला से भी ज्यादा चीनी थी। वैज्ञानिकों ने कहा कि हालांकि स्मूदी में जो शर्करा होती है वह फलों की ही होती है पर यह दांतों के लिए नुकसानदेह होता है और वजन भी बढ़ाता है। **सौजन्य-राष्ट्रदूत, दिनांक १८.०१-२०१३**

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

पुस्तक-परिचय

१. नाम-सर्व-कल्याण के स्रोत हैं वेद, **लेखक**-डॉ. रूपचन्द्र 'दीपक', **पृष्ठ संख्या**-१६, **मूल्य**-१० रुपये (प्रचारकों के लिए नि:शुल्क भी उपलब्ध), **प्रकाशक**-वैदिक उपदेशक विद्यालय, लखनऊ, **प्राप्ति स्थान**-आर्यसमाज शृंगारनगर, लखनऊ-२२६००५। -**दूरभाष**-९८३९१८१६९० ईमेल- rcdeepak@yahoo.com

पुस्तक से उद्घृत-१. एक मन्त्र अनेक वेदों में आया हो, तो उसका प्रयोजन। **२.** अक्षरों की बनावट अनित्य किन्तु वेद नित्य। **३.** अष्टाध्यायी मानव-मस्तिष्क की सर्वोत्तम रचना है। **४.** महाभाष्य के समान भी बस महाभाष्य ही है। **५.** मीमांसा 'पूर्व और उत्तर' किस कारण से? **६.** परिवार, राष्ट्र और लोकतन्त्र का पोषक वेद है। **७.** अद्वैत, द्वैत और त्रैतवाद की विवेचना। **८.** वेद में ईश्वर का उपदेश है, किसी अन्य का नहीं, ईश्वर का उपदेश वेद में है, कहीं अन्यत्र नहीं।

वेद हमारा जीवन पथ दृष्टा है। वेद किसी वर्ग, जाति समुदाय का नहीं अपितु जन-जन का बाल, वृद्ध, युवा, महिला सभी के लिए ज्ञान का स्रोत है। वेद अमूल्य धरोहर है। पाठक पढ़ें एवं ज्ञानार्जन बढ़ाएँ। **-देवमुनि, ऋषि उद्यान।**

२. नाम-सन्तान निर्माण, **लेखक**-स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक, **सम्पादक**-डॉ. राधा वल्लभ चौधरी, **मूल्य**-४ रुपये, **प्रकाशक**-दर्शन योग महाविद्यालय, आर्यवन, रोजड़, पत्रालय सागपुर, ताल्लुका-तलोद, जिला साबरकाण्ठा (गुजरात) पिन-३८३३०७। पृष्ठ संख्या-४८, **चलभाष**-०९४०९४१५०११, ०९४०९४१५०१७

आज के सत्संगों में प्राय: युवक-युवतियां नहीं आते व बूढ़े श्रोतागणों से पूछा जाए कि आपकी सन्तान क्यों नहीं यहाँ आती तो वे यह उत्तर देकर मौन हो जाते हैं कि क्या करें, आज के पुत्र-पुत्रियाँ हमारा कहना नहीं मानते। वास्तविकता यह है कि हमने उन्हें सत्संगों में जाने का अभ्यासी नहीं बनाया। हम भूल जाते हैं कि जिस प्रकार गीली मिट्टी से आप घड़ा बना सकते हैं, सुराही बना सकते हैं, या चाहें तो थाली भी बना सकते हैं, परन्तु सूखी मिट्टी से कुछ नहीं बना सकते। बचपन गीली मिट्टी के व यौवनावस्था सूखी मिट्टी के समान है। आज जो युवक-युवतियाँ धर्म-कर्म, सामाजिक एवं आध्यात्मिक कार्यों से तलाक ले चुकी हैं या ले रही हैं, उसे उनके माता-पिता तथा दादा-दादी ने उनकी बाल्यावस्था तथा किशोरावस्था में इधर लाने का समुचित प्रयास ही नहीं किया। यदि उन्होंने अपनी सन्तान को इंजीनियर बनाना चाहा तो उसके लिए ही सन्तान को सुविधा, धन, मार्गदर्शन व समाज के वरिष्ठ इंजीनियरों के हवाले कर दिया व पुत्र ने इंजीनियर बनकर दिखा दिया। किसी पुत्र या पुत्री को वकील बनाना चाहा तो वह वकील बना/बनी। व्यापारी, खिलाड़ी या राजनेता भी माता-पिता की इच्छा के बिना बनने वालों में केवल एक प्रतिशत ही युवक अपवाद रूप में मिलेंगे।

आतंकवादी, बलात्कारी, भ्रष्टाचारी व चरित्रहीन सन्तान यदि बनी है तो इसके लिए सर्वाधिक दोष माता का है। पहला गुरु माता को ही माना गया है। उसके द्वारा जो संस्कार दिए गए, मुख्यत: सन्तान ने ५ वर्ष की अवस्था तक उन्हें ही ग्रहण किया। तत्पश्चात् यह जिम्मेदारी पिता की थी, परन्तु जब दोनों संतान को पैन्टों, टी.वी., सुन्दर कोठी, कार, धन व अन्य भौतिक सुख-सुविधाओं से पालेंगे तो वैदिक संस्कारों व मान्यताओं से सन्तान का सम्बन्ध व आकर्षण जुड़ेगा ही नहीं। वह अंग्रेजी मान्यताओं की ही दास बनेगी, न कि इस श्लोक में वर्णित मान्यताओं को अपनाएगी।

पर दारेषु मातृवत् लोष्ठवत् पर द्रव्येषु।
आत्मवत् सर्वभूतेषु य: पश्यति स: पश्यति।।

जो व्यक्ति पराई स्त्री को अपनी माता, बहन या बेटी मानेगा, वह बलात्कारी नहीं बनेगा। दूसरे का सोना-चाँदी दूसरे के लिए ही सोना-चाँदी होंगे परन्तु मेरे लिए तो मिट्टी समान हैं। उच्च संस्कारवान् प्राणियों के साथ वैसा ही व्यवहार करते हैं जैसा व्यवहार वे अपने प्रति दूसरों से चाहते हैं तथा अपनी आत्मा में सब को अपने जैसा ही अनुभव करते हैं। इसके विपरीत अंग्रेजी शिक्षा यह सिखाती है-Every thing is fair in love and war अर्थात् आप को जिस भी वस्तु या व्यक्ति की इच्छा है उसे किसी भी प्रकार से प्राप्त करने में कोई दोष नहीं है। इस सभ्यता-संस्कृति ने वकील, अभिनेता, इंजीनियर, व्यापारी, राजनेता तो हमें दिए जिनका उद्देश्य केवल धन कमाना ही है, परन्तु आदर्श, उच्च संस्कारवान् पुत्र व पुत्रियां एवं सच्चे प्रभु भक्त नागरिक नहीं दिए। इसकी पीड़ा इस पुस्तिका के लेखक प्रसिद्ध संन्यासी स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक जी को है तथा उन्होंने अपने परिवार के वातावरण, माता-पिता द्वारा उनको कड़े अनुशासन, प्रतिदिन की नियमित दिनचर्या व रात्रि को उनकी दिनभर की गतिविधियों का पूरा वृत्त पूछकर यथोचित सुधार करने के निर्देश भी देने का वर्णन किया है। संध्या न करने, हवन में न बैठने, देर तक सोने या देर तक जागने व पिता जी द्वारा तैयार प्रतिदिन के कार्यों की समय सारणी के अनुसार कार्य न करने पर दण्ड रूप में कभी नाश्ता तो कभी भोजन नहीं मिलता था। ऐसा वहीं माता-पिता कर सकेंगे जिनका अपना जीवन अनुशासन बद्ध तथा उच्च आदर्शमय रहा हो क्यों

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

कि बुझा दीपक दूसरे दीपक को प्रज्वलित नहीं कर सकता तथा जिन्हें गीली मिट्टी से बर्तन बनाने की कला आती हो। पहले स्वयं सुधरने की अपेक्षा है। माता-पिता सुधरेंगे तो ही सन्तान सुधरेगी। गृहस्थाश्रम भोग-विलास का आश्रम न होकर तपस्या के लिए है। मनु महाराज ने अपराधों व पापों के लिए समुचित दण्ड की व्यवस्था दी है। दण्ड घर से शुरु होना चाहिए। मोह-ममता में फंसे माता-पिता ऐसा स्वयं तो करते नहीं परन्तु अफजल गुरु या किसी अन्य आतंकवादी या बलात्कारी को दण्ड देने की मांग तुरन्त करते हैं। बड़े अपराधी की अपराध वृत्ति घर व गली-मुहल्ले से शुरु होती है। लेखक का अपना वंश एक प्रेरक व आदर्श वंश रहा है। जिसने वैदिक धर्म के प्रचार हेतु १५ उपदेशक, चार संन्यासी व तीन वानप्रस्थी दिए हैं। पुस्तिका गृहस्थ में प्रवेश कर रहे अथवा प्रवेश कर चुके गृहस्थियों को अवश्य पढ़नी चाहिए। पुस्तिका का प्रकाशन व इसका कागज उत्तम कोटि के हैं।

-इन्द्रजित् देव, चूना भट्ठियाँ, यमुनानगर, हरियाणा

पाठकों की प्रतिक्रिया

१. आपको हम काफी याद करते हैं। अभी प्रशासन गाँव के संग शिविरों में मेरी ड्यूटी नोडल अधिकारी के रूप में १० जनवरी से २० फरवरी २०१३ तक लगातार लगाई गई थी। इन शिविरों में मैंने प्रति शिविर में वहाँ पर स्थित विद्यालयों एवं महाविद्यालयों के छात्र-छात्राओं एवं स्टाफ के लोगों को स्वामी दयानन्द जी के विचारों, अध्यात्म, आयुर्वेद स्वस्थवृत्त, मनोविज्ञान-सामाजिक कुरीतियों इत्यादि की जानकारी दी लगभग १०००० (दस हजार) लोग लाभान्वित हुए।

उपर्युक्त कार्य में मुझे आपके यहाँ ध्यान-योग इत्यादि सीखने के कारण काफी सहयोग प्राप्त हुआ। आपसे प्रेरणा की अपेक्षा रखता हूँ कि ये कार्य निरन्तर चलता रहे, इन सभी शिविरों में मुझे प्रमाण-पत्र भी शाला प्रधान द्वारा दिये गये हैं। उन्होंने पुनः इसे समझाने के लिए भविष्य में बुलना चाहा है। आपके दर्शन की कामना करता हूँ।

-डॉ. शिव कुमार शर्मा, लोहारू रोड़, गली नं.१,
बी.पी.एस. के पास, पिलानी-३३३०३१

२. मई २०१३ (द्वितीय अंक) के अन्तर्गत सम्पादकीय "चीन की समस्या नेहरू से मनमोहन सिंह तक' पढ़ा। सम्पादक महोदय ने बहुत ही विचारोत्तेजक सामग्री प्रस्तुत की जिसे पढ़कर ज्ञात हुआ कि हमारे राष्ट्र के कर्णाधारों ने इस समस्या को कैसे इतना जटिल बना दिया तथा चीन से हर वार्ता के बाद हमारी जमीन उसके अधीन हो गई। हमारी कमजोरी सैनिकों को लेकर नहीं अपितु नेतृत्व को लेकर है। जिसके अन्तर्गत पक्ष व विपक्ष दोनों ही इस विषय को लेकर समान रूप से दोषी है।

-सत्यपाल सिंह आर्य,
आर्यसमाज शास्त्री नगर, मेरठ।

अतिथि यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगांठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय जन्म तिथि/वैवाहिक वर्षगांठ आदि व दूरभाष संख्या सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नगद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

सोशल नेटवर्किंग आत्म नियन्त्रण में बाधक

फेसबुक और अन्य सोशल नेटवर्क साइट का इस्तेमाल करने वाले आत्मसंयम खोकर हिंसा, मोटापे व कर्ज से ग्रस्त हो सकते हैं। एक शोध के अनुसार सोशल नेटवर्क साइट का अगर ५ मिनट भी इस्तेमाल किया जाए तो यूजर का आत्मविश्वास बढ़ जाता है कि वे और जिद्दी हो जाते हैं। इसकी वजह से ना केवल ज्यादा खाने लगते हैं बल्कि उनकी ध्यान केन्द्रित करने की क्षमता भी कम हो जाती है। शोधकर्ताओं ने चिन्ता जताई कि फेसबुक इस्तेमाल करने से आत्म नियन्त्रण में कमी आ जाती है जिससे वे आक्रामक व्यवहार करने लगते हैं पिट्सबर्ग युनिवर्सिटी के डॉ. एंड्रयू स्टीफन और कोलम्बिया युनिवर्सिटी के डॉ. कीथ विलकॉक्स ने कहा कि किशोर बच्चों के लिए यह बात बिलकुल सही है। उन्होंने बताया कि सामाजिक व्यवस्था के लिए आत्म नियन्त्रण बेहद जरूरी है।

सौजन्य-राष्ट्रदूत, दिनांक २०.०१.२०१३

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

संस्था-समाचार

-१६ से ३१ मई २०१३

१. शहीदों को नमन-दिनाँक १८ मई २०१३ को शहीद उधमसिंह जी के भान्जे खुशीनन्द जी ऋषि उद्यान पधारे। आपका ९८ वर्ष की अवस्था में भी स्वस्थ होना, हमारे लिए संतोषप्रद था। आपने उधमसिंह जी से सम्बन्धित संस्मरण ऋषि उद्यान वासियों के लिए रखे। आपने बताया कि आपके परिवार में श्री वीसावाराम जी के दो पुत्र हुए निक्का सिंह जी व तहलसिंह जी। पुन: तहलसिंह जी के भी दो पुत्र हुए साधुसिंह जी व उधमसिंह जी। तहलसिंह जी उपली स्टेशन के निकट रेलवे फाटक पर चौकीदारी करते थे। एक दिन दोनों बालक साधुसिंह जी (अवस्था लगभग १० वर्ष) व उधमसिंह जी (अवस्था लगभग ८ वर्ष) अपने पिता के साथ फाटक पर थे। तभी कुछ अंग्रेज आए व बन्द फाटक को खोलने का आदेश दिया। गाड़ी आने का समय था अत: तहलसिंह जी ने फाटक खोलने से मना कर दिया, इस बात पर इन अंग्रेज अधिकारियों ने अपने मद में चूर होकर इन छोटे-छोटे बालकों के सामने ही इनके पिता की पिटाई कर दी, इन चोटों से बाद में तहलसिंह जी की मृत्यु हो गई। पुन: दोनों अनाथ को अमृतसर के एक अनाथाश्रम में प्रवेश दिलाया गया। पिता की मृत्यु ने इन बालकों के मन में अंग्रेजी शासन के प्रति वैर का बीज बोया। अनाथाश्रम में बड़े लड़के (साधु सिंह जी) को दुर्भाग्य से कुत्ते ने काट लिया और वह भी चल बसा। अब उधमसिंह जी अपने पिता की अकेली सन्तान बचे थे। आपके चाचा निक्का सिंह जी की एक पुत्री थी श्रीमती आस कौर जी, जिनसे आपका स्नेहपूर्ण सम्बन्ध था, ऋषि उद्यान पधारे श्री खुशीनन्द जी इन्हीं आसकौर जी के सुपुत्र हैं।

उन दिनों पूरा पंजाब ही देशभक्ति के रंग में डूबा था अत: बालक उधम भी इससे अछूता न रह सका। जब रोलेक्ट एक्ट तथा इसके कारण डॉ. सत्यपाल व डॉ. किचलू जैसे लोकप्रिय नेताओं को बन्दी बना लिया गया तब उसका विरोध करने के लिए १३ अप्रैल १९१९ को वैशाखी के दिन अमृतसर के प्रसिद्ध जलियाँवाला बाग में सभा बुलायी गई। उधमसिंह जी भी वहाँ अपनी सेवा देने पहुँचे। आप सभा में उपस्थित बच्चों, महिलाओं, वृद्धों व अन्य नागरिकों को पानी पिला रहे थे। आप पानी लेने बाग से दूर गए और उसी समय जनरल डायर ने इतिहास का वो क्रूरतम हत्याकाण्ड कर दिया जिसने अंग्रेजों की भारत में 'सुशासन-स्थापना' रूपी छद्म की पोल खोल दी। इस हत्याकाण्ड को देखकर उधम जी ने इसका बदला लेने का संकल्प लिया। बिना किसी पारिवारिक आर्थिक मदद के अपने पुरुषार्थी से आप इंग्लैण्ड गए। वहाँ 'डायर' नामक एक अन्य अंग्रेज अधिकारी था जो घोषणा करता था कि यदि मुझे मौका मिले तो मैं इन असभ्यों (भारतीयों) को सबक सिखाने के लिए जलियाँवाला बाग से भी जघन्य काण्ड कर सकता हूँ। इस डायर को आपने योजना पूर्वक एक सभा में सबके सामने गोली मारी व अपनी गिरफ्तारी दी। अत: आपको अल्पायु में ही फांसी की सजा दे दी गई।

परोपकारिणी सभा भारत माता के ऐसे वीर सपूतों को नमन करती है तथा साथ ही खुशीनन्द जी जैसे महानुभावों का धन्यवाद भी करती है कि आपके कारण सभा ऐसे शहीदों को विशेष रूप से श्रद्धांजलि अर्पित कर पाती है।

२. संस्कृत संभाषण शिविर-परोपकारिणी सभा एवं लोकभाषा प्रचार समिति राजस्थान शाखा के तत्त्वावधान में ऋषि उद्यान में दिनांक १७ से २६ मई २०१३ तक दस दिवसीय आवासीय संस्कृत शिक्षण-प्रशिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया। शिविर का उद्घाटन समिति के अध्यक्ष एवं परोपकारिणी सभा के प्रधान डॉ. धर्मवीर जी ने किया। उद्घाटन भाषण में डॉ. धर्मवीर जी ने संस्कृत के प्रचार-प्रसार के लिए हम सभी को अधिक से अधिक प्रयत्न करने के लिए उत्साहित किया तथा उसके संवर्द्धन के लिए उपाए भी बताए। मुख्यातिथि के रूप में पं. रामचन्द्र शास्त्री ने संस्कृत-भाषा में ही संस्कृत का महत्त्व बताया तथा विशिष्ट अतिथि डॉ. बद्रीप्रसाद जी पंचौली ने संस्कृत की सार्वभौमिकता पर प्रकाश डाला।

शिविर में केरल, महाराष्ट्र, उड़ीसा, उत्तरप्रदेश एवं राजस्थान से लगभग ४० शिविरार्थियों ने भाग लिया। शिविर के दौरान स्वामी विष्वङ् जी परिव्राजक, गुरुकुल के उपाचार्य सत्येन्द्र जी, श्रीराम लाल गुप्ता, डॉ. पुष्पा गुप्ता ने शिविरार्थियों को अपने उद्बोधन से लाभान्वित किया। शिविर को सफल बनाने में शिविर के मुख्य संचालक डॉ. निरञ्जन साहु का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा तथा सहयोग कर्ताओं में डॉ. माधुरी गुप्ता, डॉ. आशुतोष पारीक, श्री जयदेव एवं श्री अभिषेक जोशी का प्रशंसनीय योगदान रहा।

३. डॉ. धर्मवीर जी का प्रचार कार्यक्रम-

(क) सम्पन्न कार्यक्रम-१. १८ मई-वैदिक विद्वान् विरजानन्द जी दैवकरणि जी के परिवार में यज्ञ एवं प्रवचन (झज्जर, हरि.)। **२. २२ से २६ मई**-राउरकेला (ओडिशा) में संस्कार प्रशिक्षण शिविर में संस्कार विधि वर्णित संस्कारों का प्रशिक्षण प्रदान किया। **३. २९ मई से ४ जून**-गोरखपुर (उ.प्र.) के कई आर्यसमाजों में प्रवचन।

(ख) आगामी कार्यक्रम-१. १६-२३ जून-योग-शिविर, ऋषि उद्यान में प्रशिक्षक। **२. २७-३० जून**-आर्यसमाज की यज्ञपद्धति विषयक तृतीय गोष्ठी में भाग लेंगे (आर्ष गुरुकुल

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

महाविद्यालय, नर्मदापुरम, होशंगाबाद, म.प्र.)

४. आचार्य सोमदेव जी का प्रचार कार्यक्रम-२२ व २३ मई २०१३ को आर्यसमाज रेवाली, (ग्राम-रेवाली, बहरोड़, अलवर) के वार्षिकोत्सव में व्याख्यान प्रदान किए। यहाँ कार्यकर्त्ताओं का उत्साह इसी बात से समझा जा सकता है कि वार्षिकोत्सव का यह कार्यक्रम समाज में ४० वर्षों बाद सम्पन्न हुआ। कई सौ की संख्या में लोगों की उपस्थिति थी।

५. आचार्य सानन्द जी का प्रचार-प्रसार कार्यक्रम-गार्गी कन्या महाविद्यालय भैयाँ-चामड़ में १५ से २५ मई २०१३ तक होने वाले योग शिविर में उपस्थित शिविरार्थियों व गुरुकुल की छात्राओं के मध्य आपने योगदर्शन का परिचय अत्यन्त सरल भाषा में प्रस्तुत किया और आत्मनिरीक्षण आदि कक्षाएँ भी लीं।

यज्ञ एवं प्रवचन-जैसा कि विदित है ऋषि उद्यान आर्यजगत् के उन स्थानों में से एक है जहाँ पूरे वर्ष दोनों समय अपरिहार्य रूप से यज्ञ एवं प्रवचन का कार्यक्रम होता है। प्रात:काल यज्ञोपरान्त वेद के कुछ मन्त्रों का पाठ तथा पूर्व निर्धारित मन्त्र का महर्षि दयानन्द कृत भाष्य का स्वाध्याय किया जाता है। प्रात: प्रवचन के क्रम में सामान्य दिनों में डॉ. धर्मवीर जी जहाँ पुरुषसूक्त (यजुर्वेद का ३१वाँ अध्याय) पर व्याख्यान करते हैं वहीं स्वामी विष्वङ् जी अपने योगदर्शन के क्रम को आगे बढ़ाते हैं तथा सायं सत्संग में आचार्य सोमदेव जी ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका का तथा आचार्य सत्येन्द्र जी व्यवहारभानु आदि ग्रन्थों का क्रमश: स्वाध्याय कराते हैं।

प्रात: प्रवचन-यजुर्वेद के ३१वें अध्याय के प्रवचन के क्रम में माननीय सभा के कार्यकारी प्रधान श्री धर्मवीर जी ने बताया कि रचना प्रक्रिया का नाम ही यज्ञ है और जब निर्माण पूरा हो जाता है तो यज्ञ पूरा हो जाता है और यदि हमें, ईश्वर ने सृष्टि बनाने रूपी जो यज्ञ किया, उसको समझना है तो यज्ञ में जिन-जिन साधनों और जिस क्रम की आवश्यकता होती है। उसे समझना होगा।

१९.०५.१३-रविवारीय प्रवचन क्रम में उपाध्याय श्री सोमदेव जी ने अस्ति, दुरस्ति और स्वस्ति को वेद के "स्वस्ति पन्था मनुचरेम" मन्त्र से समझाते हुए बताया कि लक्ष्य प्राप्ति के लिए मार्ग तय करने से पहले तीन बातों को ध्यान देना चाहिये। **१.** मार्ग का छोटा होना **२.** विघ्न बाधाओं से रहित होना **३.** सुख-सुविधाओं से युक्त होना।

१८, २०-३१ मई-स्वामी विष्वङ् जी ने योगदर्शन के विभूति पाद (तीसरा पाद) में सिद्धियों के प्रसंग में बताया कि योगी द्वारा हाथी आदि प्राणियों के बलों में संयम (धारणा, ध्यान, समाधि) करने से उसे हाथी आदि के तुल्य बल प्राप्त होता है (सूत्र ३.२४)।

सूत्र २५ में योगी द्वारा मन की ज्योतिष्मती प्रवृत्ति में संयम से सूक्ष्म, परोक्ष और दूर की वस्तुओं का ज्ञान होना बताया।

आगे ३.२६-३.२८ के सूत्रों में स्वामी जी ने योगी द्वारा सूर्य, चन्द्रमा और ध्रुव में संयम करने से क्रमश: लोक-लोकान्तरों का ज्ञान, तारों के स्थानों का ज्ञान, अन्य तारों के गति का ज्ञान होना बताया।

आगे ३.२९-३० में स्वामी जी ने बताया कि योगी द्वारा शरीर में नाभि और कण्ठ में संयम से क्रमश: शरीर की रचना का ज्ञान तथा भूख-प्यास की निवृत्ति होती है। कछुवे के आकार की नाड़ी (कण्ठकूप से नीचे छाती स्थित) में संयम करने से शारीरिक स्थिरता को प्राप्त होता है। कितनी स्थिरता? इस प्रश्न का उत्तर व्यास भाष्य के आधार पर साँप व कछुवे का उदाहरण प्रस्तुत कर दिया गया (सू. ३१)।

सायंकालीन ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के मुक्ति विषय के क्रम में आचार्य श्री सोमदेव जी द्वारा अविद्यादि पञ्च क्लेशों की चर्चा में बताया कि मिथ्या ज्ञान ही बन्धन और विशुद्ध ज्ञान ही मुक्ति का कारण होता है और जो योगाभ्यासी इस शरीर को अनित्य मानता है वह संसारिक व्यक्ति की तुलना में इस शरीर की रक्षा का प्रयत्न बहुत अच्छी तरह से करता है। जब अविद्या नष्ट होती है तब उस जीव के दोष भी नष्ट हो जाते हैं इससे उसकी भोग, अधर्म की वासना नष्ट हो जाती है। वासना नष्ट हो जाने से फिर जन्म नहीं होता इससे दु:खों का अत्यन्त अभाव हो जाता है इसलिए अविद्या के नाश और विद्या की वृद्धि हेतु सब सामर्थ्य से सब दिन प्रयत्न किया करें।

२१ व २२ मई को श्री तपेन्द्र जी ने प्राण की चर्चा में बताया कि प्राण विशुद्ध ऊर्जा का नाम है जिसमें किसी भी ऊर्जा का मिश्रण नहीं होता और वही हमें जीवन और बल प्रदान कर रहा है। कण्ठ के नीचे, दोनों स्तनों के बीच में, उदर से ऊपर जो गर्त है वह हृदय शरीर में प्राणों का केन्द्र है। यह भी स्पष्ट किया कि रक्त को एक स्थान से दूसरे स्थानों पर ले जाने वाले यन्त्र का नाम हृदय नहीं है। और ये प्राण हमको सूर्य की रश्मियों और अन्य लोक-लोकान्तरों के सूर्यों की रश्मियों से हमें प्राप्त हो रहे हैं। प्राणायाम का उद्देश्य "उदान की शरीर में स्थिरता को प्राप्त" करना है।

२३ व २४ मई को व्यवहारभानु के क्रम में आचार्य सत्येन्द्र जी ने बताया कि व्यक्ति दूसरे से जो-जो प्रतिज्ञा करें उसे यथावत् पूरी करें, प्रमाद न करें, रोचक दृष्टान्त के माध्यम से जड़ बुद्धि और तीव्र बुद्धि वाले लोगों के बारे में समझाया।

२६ मई को ब्र. सत्यव्रत जी द्वारा गाय की महत्ता में गाय का दूध, दही, घी व मूत्र के लाभों को बताया।

२८ मई को श्री रमेश मुनि जी ने बताया कि व्यक्ति की यह स्वाभाविक इच्छा है कि वह सुख की प्राप्ति और दु:खों से हटना चाहता है लेकिन जैसे-जैसे वो सुखों को भोगता है सुख प्राप्ति की लालसा (तृष्णा) और बढ़ जाती है। मुनि जी ने लक्ष्य प्राप्ति के साधनों और बाधकों पर भी प्रकाश डाला।

-ब्र. रविशंकर व दीपक आर्य।

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

आर्यजगत् के समाचार

१. वेद प्रचार मण्डल जिला फर्रुखाबाद के प्रधान आचार्य चन्द्र देव शास्त्री के पावन सान्निध्य में जनपदीय आर्यवीर दल फर्रुखाबाद द्वारा युवाओं के उज्ज्वल चरित्र निर्माण हेतु दिनांक १७ से २३ जून २०१३ तक सात दिवसीय आर्यवीर दल प्रशिक्षण शिविर का आयोजन जनपद फर्रुखाबाद में किया जा रहा है। उपरोक्त शिविर पूर्णतया आवासीय एवं निशुल्क है शिविरार्थी नित्य उपयोगी वस्तु चार, पी.टी. शू, खाकी हाफ पेंट, सफेद बनियान आदि साथ लावें।

दूर स्थानों से आने वाले आर्यवीर शिविर स्थल पर एक दिन पूर्व १६ जून की शाम को उपस्थित हो जायें।

अग्रिम पंजीकरण हेतु नीचे लिखे दूरभाष नम्बरों पर सम्पर्क करें। **-सम्पर्क: ९४५००१८१४१, ९९३५०८३३२६**

२. त्रिदिवसीय आर्य महा सम्मेलन सम्पन्न-श्री छोटे लाल मैमोरियल हाई स्कूल अटोर नंगला (गाजियाबाद) में **आर्य प्रतिनिधि सभा, गाजियाबाद, हापुड़** के तत्वावधान में आयोजित आर्य महा सम्मेलन का विधिवत समापन आज **राष्ट्र चेतना कवि सम्मेलन** के साथ हो गया।

प्रतिदिन चार सत्रों में चलने वाले इस महा सम्मेलन में योग-साधना शिविर, राष्ट्र चेतना यज्ञ, वेद सम्मेलन आदि हुए हैं।

३. जीवनप्रभात के निराधार बच्चों ने की हरिद्वार की यात्रा-आर्यसमाज गांधी धाम संचालित **जीवनप्रभात** में भूकम्प से निराधार हुए १६२ बच्चों को आश्रय दिया गया है। इन बच्चों का जीवनप्रभात में नि:शुल्क, जाति-पाति एवं बिना धार्मिक भेदभाव के अपने बच्चों जैसा लालन-पालन हो रहा है।

गर्मी की छुट्टियों में हर माता-पिता अपने बच्चों का घुमाने ले जाते हैं। भूकम्प के बाद पिछले १२ वर्ष से जीवनप्रभात गांधीधाम एवं जीवनप्रभात पांडिचेरी के निराधार बालकों को छुट्टियों में विविध स्थानों पर दानदाताओं के सहयोग से पिकनिक पर ले जाते हैं।

इस वर्ष इन बच्चों ने राजकोट के कुछ गुजराती परिवारों के आर्थिक सहयोग से दिल्ली, हरिद्वार, देहरादून, मसूरी के विविध स्थानों की यात्रा की। ९ दिन की इस शैक्षणिक यात्रा में बच्चों ने मार्ग में आने वाले विविध स्थानों को भी देखा।

४. पाकिस्तानी हिन्दुओं का यज्ञोपवीत संस्कार हुआ तथा गुरुकुलों ने बच्चों को गोद लेने की घोषणा की-नई दिल्ली। पाकिस्तान से आये हिन्दुओं का आज वैदिक रीति से मूर्धन्य विद्वानों की उपस्थिति व आशीर्वाद में यज्ञोपवीत संस्कार किया गया। केन्द्री आर्य युवक परिषद् व विश्व हिन्दू परिषद् के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित इस कार्यक्रम में पाक-हिन्दू परिवारों ने पूरे मनोयोग से भारत माता की चरण वंदना कर व धर्म और राष्ट्र के उत्थान में अपने आप को समर्पित करने की प्रतिज्ञा की।

५. श्री गुरु विरजानन्द संस्कृत महाविद्यालय, करतारपुर, जालन्धर, पंजाब में निम्नलिखित अध्यापकों की आवश्यकता है-**१. वेदाचार्य** (वेद तथा संस्कृत में एम.ए.), **२. साहित्याचार्य** (एम.ए.-संस्कृत), **३. व्याकरणाचार्य** (एम.ए.-संस्कृत), **४. दर्शनाचार्य** (एम.ए.-संस्कृत), **५. कम्प्यूटर टीचर।**

नोट-(क) आचार्य परीक्षा पास अध्यापकों को वरीयता प्रदान की जाएगी। **(ख)** सेवानिवृत्त संस्कृत विद्वान्/विदुषियां भी इस पद के लिए आवेदन भेज सकते/सकती हैं। **(ग)** वेतन योग्यतानुसार दिया जाएगा। **(घ)** आवेदन-पत्र शीघ्रातिशीघ्र भेजे जाएँ और आवेदन पत्र पर अपना मोबाइल नं. अवश्य दें।

६. गुरुकुल संस्कृत महाविद्यालय शुक्रताल, मुजफ्फरनगर में प्रवेश प्रारम्भ-आपको जानकर अपार हर्ष होगा कि गुरुकुल महाविद्यालय गंगा के पावन-तट पर ऋषि महर्षियों की तपस्थली, प्रकृति के सुरम्य वातावरण में स्थित है। यहाँ संस्कृत भाषा के साथ-साथ आधुनिक विषयों जैसे अंग्रेजी, गणित, इतिहास, भूगोल एवं अर्थशास्त्र आदि विषयों का अध्यापन सुयोग्य अध्यापकों के द्वारा कराया जाता है। कम्प्यूटर शिक्षा का उत्तम ज्ञान कराया जाता है।

कृपया अपने होनहार बच्चों को संस्कार युक्त शिक्षा दिलाने हेतु दूरभाष पर वार्ता करके प्रवेश दिलायें। प्रवेश नियम डाक से अथवा व्यक्तिगत रूप से प्राप्त कर सकते हैं।

रोजगार सूचना-व्याकरणाचार्य (सहायक अध्यापक), **क्लर्क** (कम्प्यूटर की विशेष योग्यता हो), **हॉस्टल वार्डन** (संरक्षक-खेल प्रशिक्षक या गुरुकुल स्नातक को वरीयता), **रसोईया, गौसेवक व चपरासी।**

नोट-वेतन योग्यतानुसार।

-सम्पर्क : आचार्य इन्द्रपाल, मुख्य अधिष्ठाता,
मो. ९४११९२९५२८

७. आर्यसमाज मन्दिर, सागरपुर, नई दिल्ली का ३३ वाँ वार्षिकोत्सव दिनांक १९, २० व २१ अप्रैल २०१३ को अत्यन्त हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। त्रिदिवसीय इस कार्यक्रम में प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् आचार्य रामसुफल शास्त्री (हांसी) हिसार, श्री रामनिवास जी 'गुणग्राहक' व प्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

सत्यपाल 'सरल' देहरादून से पधारें।

८. गुरुकुल प्रभात आश्रम में प्रवेश परीक्षा-प्राचीन वैदिक आर्ष-परम्परा के संवाहक **गुरुकुल प्रभात आश्रम, मेरठ, उत्तरप्रदेश** में नवीन प्रवेशार्थी छात्रों की प्रवेश-परीक्षा पूर्व वर्षों की भांति इस वर्ष भी २६ से ३० जून २०१३ तक सम्पन्न होगी। प्रवेशार्थी छात्र की अर्हता पञ्चम श्रेणी उत्तीर्ण, मेधावी, स्वस्थ, सुशील एवं १० वर्षीय होनी चाहिए। प्रवेश-परीक्षा लिखित एवं मौखिक दो चरणों में एक दिन में ही होगी। लिखित-परीक्षा में ६० प्रतिशत अंक प्राप्त छात्र ही मौखिक परीक्षा का अधिकारी होगा।

विशेष जानकारी के लिये **आचार्य, गुरुकुल प्रभात आश्रम, टीकरी, भोला झाल, मेरठ** से सम्पर्क करें। दूरभाष संख्या-०९७५८७४७९२०, ०९७१९३२५६७७

९. स्वामी श्रद्धानन्द गुरुकल महाविद्यालय, परली, जिला-बीड़, महाराष्ट्र-आर्यसमाज परली द्वारा संचालित 'स्वामी श्रद्धानंद गुरुकुल महाविद्यालय में दिनांक १५ जून २०१३ से चौथी कक्षा उत्तीर्ण छात्रों को पाँचवी कक्षा में प्रवेश दिया जा रहा है। नगर के वैद्यनाथ मंदिर से २ कि.मी. दूरी पर सुरम्य पर्वतीय प्रदेश में विद्यमान इस शिक्षास्थली में महर्षि दयानन्द आर्ष विद्यापीठ झज्जर (रोहतक) से संलग्न आर्ष पाठ्यक्रम चलाया जाता है, जिसमें वेद व्याकरण संस्कृत साहित्य के साथ ही अंग्रेजी हिन्दी, मराठी, गणित, विज्ञान आदि विषयों का तज्ज्ञ अध्यापकों के सानिध्य में अध्यापन होता है। गरीब, अनाथ व होनहार छात्रों को नि:शुल्क प्रवेश दिया जाएगा। अत: अपने बच्चों को प्रवेश दिलावें।

संपर्क-आचार्य प्रवीण, ८८५५०८०६३२

१०. सामवेद पारायण यज्ञ-ग्राम खींवताना, तह-डेगाना, जिला-नागौर में दिनाँक १७, १८ व १९ अप्रैल २०१३ को श्री श्रवण सिंह जी के घर पर तीन दिवसीय सामवेद पारायण यज्ञ एवं वेद कथा का भव्य आयोजन किया गया, जिसमें आचार्य शिवकुमार शास्त्री (कोलायत) के आचार्यत्व में ब्र. अजय कुमार व सौरभ (उदयपुर) के द्वारा वेदपाठ किया गया।

११. परोपकारिणी सभा अजमेर के सौजन्य से नागौर जिले में ६ से २६ अप्रैल २०१३ तक वेदप्रचार का आयोजन किया गया। जिसमें अनेक ग्रामों में जिला सभा के अध्यक्ष श्री किशनाराम जी आर्य के संयोजन में यज्ञों का आयोजन हुआ। इस कार्यक्रम में आर्यजगत् के सुप्रसिद्ध भजनोपदेशक पं. भूपेन्द्रसिंह आर्य व पं. लेखक शर्मा के भजन हुए। कई स्थानों पर श्री स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती भी पधारे। सभी ग्रामों में बड़ी संख्या में स्त्री, पुरुषों ने सत्संग का लाभ उठाया। अनेक लोगों ने व्यसन मुक्ति का संकल्प लिया।

१२. आर्ष गुरुकुल किंग्स वे कैम्प, दिल्ली में प्रवेश प्रारम्भ-वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार में अपने जीवन को समर्पित करने वाले निष्ठावान युवकों हेतु आर्ष गुरुकुल किंग्स वे कैम्प दिल्ली में प्रवश प्रारम्भ है। अष्टाध्यायी क्रम से प्रथमावृत्ति, काशिका, महाभाष्य व दर्शनों, उपनिषदों आदि का अध्यापन कराया जायेगा। गुरुकुल में भोजन, आवास की नि:शुल्क व्यवस्था रहेगी। प्रवेश के इच्छुक विद्यार्थी अपना हस्तलिखित आवेदन-पत्र आर्ष गुरुकुल के पते पर भेजें, जिसमें दूरभाष, नाम, स्थान आदि का विवरण हो। **सम्पर्क-ऋषि देव आर्य, आर्ष गुरुकुल, आर्यसमाज मन्दिर, हडसन लाइन, किंग्स वे कैंप, गुरुतेग बहादुर नगर, जी. टी. बी. नगर मेट्रो स्टेशन, गेट नम्बर-३, दिल्ली-११०००९, दूरभाष-९८१८७०४६०९, ईमेल-** rishidev.santosh@gmail.com

१३. महर्षि दयानन्द सम्पूर्ण जीवन-चरित्र का भव्य विमोचन-रक्त साक्षी पं. लेखराम की परम्परा के लेखनी और वाणी के धर्म-धनी और आर्यसमाज के गौरव प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु जी द्वारा सम्पादित व अनुदित महर्षि दयानन्द सरस्वती के जीवन और दर्शन पर दो खण्डों में प्रकाशित होने वाले लगभग १२०० पृष्ठ के वृहद् आकार वाले अद्‍भुत ग्रन्थ का भव्य विमोचन विगत दिनों आर्यसमाज सैक्टर-९ पंचकूला (हरियाणा) के प्रधान श्रीमान् धर्मवीर बत्रा जी के कर-कमलों द्वारा किया गया। यह अनूठा ग्रन्थ महर्षि जीवन के प्रत्येक पक्ष पर प्रकाश तो डालता ही है, साथ ही उनके सम्पूर्ण जीवन की विभिन्न घटनाओं पर अपनों और बेगानों द्वारा समय-समय पर की जाने वाली शंकाओं और अनावश्यक आलोचनाओं का सटीक, सप्रमाण युक्ति-युक्त उत्तर भी देता है। मास्टर लक्ष्मण जी के 'महर्षि दयानन्द मुकम्मिल जीवन चरित्र' नामक उर्दू भाषा के मूल ग्रन्थ का भाव-भाषानुवाद इस महान कृति का आधार है जो सम्पादक की अद्‍भुत ऊहा, गहन अनवेषण-अध्ययन और वर्षों के अथक परिश्रम और लग्न का दिग्दर्शन कराता है।

विमोचन से पूर्व प्राचार्य रमेश चन्द्र 'जीवन' ने लेखक और सम्पादक, आर्यजगत के अद्वितीय विद्वान् गवेशक प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु की ऐतिहासिक जानकारी और इस भगीरथ प्रयास की भूरि-भूरि प्रशंसा की। इस ग्रन्थ रत्न की प्रथम प्रति प्रि. भगवान दास जी की सुपुत्री श्रीमती शारदा जी, उनके पति श्री सोहनलाल अग्रवाल और पुत्र विनय जी को भेंट स्वरूप प्रदान करते हुए इस ग्रन्थ की प्रेरणा देने वाले प्रि. भगवानदास जी को श्रद्धा सुमन अर्पित किए गए।

१४. परतवाड़ा में बाल शिविर सम्पन्न-महर्षि दयानन्द सरस्वती वैदिक चैरिटेबल ट्रस्ट, परतवाड़ा (महाराष्ट्र) द्वारा ग्रीष्मकालीन वैदिक योग व बाल संस्कार शिविर विगत ६ से १२ मई २०१३ को सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ। इस सात दिवसीय आवासीय शिविर में लगभग ४० बालकों ने भाग लिया, जिसमें तीन बालिकाएँ भी थी। शिविर में आचार्य कर्मवीर जी (सहारनपुर, उ.प्र.) तथा आर्यवीर चि. तुषार कपिल

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

(सहारनपुर, उ.प्र.) का सान्निध्य प्राप्त हुआ।

शिविरार्थियों को आचार्य कर्मवीर जी द्वारा आर्यसमाज का उद्देश्य, वैदिक सिद्धान्त तथा उनका मानवीय जीवन में उपयोग, सन्ध्या-यज्ञ, वेद का महत्त्व आदि विषयों पर तथा आसन, प्राणायाम, जूडो-कराटे आदि का भी भली-भांति प्रशिक्षण दिया गया।

१५. दुर्व्यसन मुक्ति मंच, बून्दी-आचार्य सानन्द जी, ऋषि उद्यान अजमेर की प्रेरणा से संचालित दुर्व्यसन मुक्ति मंच द्वारा बून्दी जिले में जन-जागरुकता सम्बन्धी कई कार्यक्रम आयोजित किए गये। दुर्व्यसन मुक्ति मंच के संयोजक लादूलाल सेन ने बताया कि मई माह में चित्र प्रदर्शनी, प्रोजेक्टर फिल्म व यज्ञ के माध्यम से लोगों को स्वास्थ्य व संस्कारों की शिक्षा दी गई।

८ मई २०१३ को नैनवाँ उपखण्ड में गंगासागर बाँध पर, **१५ मई २०१३** को छत्रपति शिवाजी बस स्टेण्ड देई पर, **२४ मई २०१३** को बाँक्या नया गाँव नैनवाँ में तथा **३१ मई २०१३** को विश्व तम्बाकू निषेध दिवस के अवसर पर निबन्ध प्रतियोगिता व विचार गोष्ठी का आयोजन किया गया।

१६. मंदसौर की जेल में हुआ वेदों का प्रचार और पिपलिया मण्डी में ५८ दम्पत्तियों ने की पूर्णाहूति-आर्यसमाज पिपलिया मण्डी ने स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर ८ दिनों की वेद प्रचार रथ यात्रा का आयोजन किया था, जिसके अन्तर्गत ११ से १८ मई तक ग्राम बूढा, मुन्देरी, गुडभेली पिपलिया मण्डी सहित अनेक ग्रामों में प्रचार किया गया। अन्तिम दिन पिपलिया मण्डी व आर्यसमाज के पंडाल में आनन्द पुरुषार्थी यज्ञ के ब्रह्मा थे एवं २० यज्ञ वेदियों पर ५८ दम्पतियों ने श्रद्धा पूर्वक पूर्णाहूति प्रदान की।

१७. गार्गी कन्या महाविद्यालय भैंयाँ चामड़, अलीगढ़ में प्रवेश प्रारम्भ-यह महाविद्यालय लगभग ग्यारह वर्षों से कन्याओं के भविष्य निर्माण में गतिशील है। यहाँ पर विभिन्न प्रान्तों की कन्याएँ अध्ययनरत हैं। स्वच्छ एवं प्राकृतिक वातावरण, रहने की एवं भोजन की उत्तम व्यवस्था, गोशाला, यज्ञशाला आदि।

इच्छुक प्रवेशार्थी निम्न पते पर पत्र-व्यवहार एवं सम्पर्क करें। **कुलाधिपति-स्वामी चेतन देव जी,**
मो. ०९४१०४२६१९९, ०५७२२२६३४८९

चुनाव-समाचार

१८. आर्यसमाज शास्त्रीनगर, मेरठ का वार्षिक चुनाव सम्पन्न हुआ जिसमें **प्रधान**-राजेन्द्र सिंह वर्मा, **मन्त्री**-प्रेमचन्द गुप्ता, **कोषाध्यक्ष**-विजेन्द्र बाबू, **सहकोषाध्यक्ष**-देवेन्द्र कुमार वर्मा चुने गए।

१९. आर्यसमाज, सरदारपुरा, जोधपुर के द्विवार्षिक चुनाव दिनांक १९.०५.२०१३ को सम्पन्न हुए। इसमें **संरक्षक**-हरेन्द्रकुमार गुप्ता एवं ओ.पी. टांक, **प्रधान**-एल.पी. वर्मा, **मन्त्री**-मदनलाल गहलोत, **कोषाध्यक्ष**-लक्ष्मणसिंह आर्य को चुना गया।

२०. आर्यसमाज शास्त्री नगर, मेरठ वार्षिक चुनाव दिनांक १९.०५.२०१३ को सम्पन्न हुए। इसमें **प्रधान**-राजेन्द्रसिंह वर्मा, **मन्त्री**-प्रेमचन्द गुप्त, **कोषाध्यक्ष**-बी. बाबू को चुना गया।

२१. आर्य उप प्रतिनिधि सभा, लखनऊ के वार्षिक चुनाव में निम्नलिखित पदाधिकारियों का चयन किया गया- **प्रधान**-रेवती रमन एडवोकेट, **मन्त्री**-प्रत्यूष रत्न पाण्डेय, **कोषाध्यक्ष**-राजीव बतरा।

२२. आर्यसमाज तलवंडी, सैक्टर-२, कोटा के वार्षिक चुनाव वर्ष २०१३-१४ में **प्रधान**-रघुराज सिंह कर्णावत, **उपप्रधान**-श्रीचन्द गुप्ता, **मन्त्री**-भैरों लाल शर्मा, **कोषाध्यक्ष**-शिवदयाल गुप्ता को चुना गया।

२३. आर्यसमाज मन्दिर मुरैना, मध्यप्रदेश का वर्ष २०१३-१४ मे वार्षिक चुनाव में **प्रधान**-केशवसिंह तोमर, **मन्त्री**-विजयेन्द्र कुमार श्रीवास्तव, **कोषाध्यक्ष**-घनश्याम सिंह आर्य को चुना गया।

२४. आर्यसमाज भोगल, जंगपुरा, नई दिल्ली के १९ मई २०१३ को हुए चुनाव में **प्रधान**-डॉ.जे.पी. गुप्ता, **उपप्रधान**-डॉ. आभा विरमानी एवं श्री अनिल नागपाल, **महामन्त्री**-श्री अविनाश चन्द्र धीर, **कोषाध्यक्ष**-श्री श्रवण कुमार वलेचा।

वैवाहिक-समाचार

२५. श्रुति शर्मा (एम.ए. हिन्दी, बी.एड.), जन्मतिथि-३० जून, १९८४, कद-५'४" स्वस्थ, सुन्दर, वर्ण-गेहुंआ, पूर्ण शाकाहारी, मधुर भाषी, सुसंस्कारी युवती के लिए (विवाह के एक माह पश्चात् ही दुर्भाग्य कारणों से वैवाहिक सम्बन्ध समाप्त, तत्पश्चात् कानूनी तौर पर तलाक) वैदिक विचारधारा वाले सुयोग्य, सरकारी सेवारत या उच्च व्यवसाय सम्पन्न, जीवन साथी चाहिए (गुरुकुलीय स्नातक को वरीयता)। **सम्पर्क सूत्र- ऋषि शर्मा, रोहिणी, सैक्टर-६, मो. ९८१०७९६२०३**

२६. प्रतिष्ठित आर्यसमाजी परिवार के संस्कारी युनिवर्सिटी लैक्चरर, अलीगढ़, २९ वर्षीय, ५'-१०" हेतु कन्या गुरुकुल, दैव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार, पतंजलि योगपीठ, वनस्थली शिक्षित विदुषी चाहिये। **सम्पर्क-९४५६८०४६६६**

शोक-समाचार

२७. आर्यसमाज भीम नगर, गुड़गाँव, हरियाणा के आर्य नेता श्री रामचन्द्र आर्य को धर्मपत्नी शोक -पूज्या माता ममतामयी-करुणामयी-स्नेहमयी वन्दनीया **श्रीमती रामव्यॉ जी** का निधन १२ अप्रैल २०१३ को हुआ। वह ८२ वर्ष की थी। अपने पीछे ५ सुपुत्रियाँ, एक सुयोग्य सुपुत्र तथा भरा-पूरा परिवार छोड़कर गई हैं।

स्वर्गीय माता जी मरणोपरान्त नेत्रदान करके अपने निस्वार्थ

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

एवं परोपकारी जीवन का परिचय दिया। परिवार की ओर से धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाओं को दान भी दिया गया।

२८. शोक-समाचार-आर्यनेता **श्री देवीदास जी पांडूरंगजी भालदार** का दिनांक २०.०५.२०१३ को स्वर्गवास हो गया। आप ७२ वर्ष की आयु के थे। मु.पो. सालेपुर, तह-अचलपुर, अमरावती में जन्मे श्री देवीदास जी ने आसपास के क्षेत्रों में आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। आप अपने धन से वैदिक साहित्य का क्रय कर उसका लोगों में वितरण किया करते थे। ❋

बर्तन का रंग और भोजन का स्वाद।

ठण्डे देशों में रहने वाले अधिकतर लोग मानेंगे कि गर्मागर्म चॉकलेट ड्रिंक पीने का मज़ा तब आता है जब आप अपनी सारी चिन्तायें छोड़कर, आरामदेह कुर्सी पर बैठकर, चप्पल-जूते उतारकर रिलैक्स कर रहे होते हैं। लेकिन अभी तक बहुत कम लोगों को यह बात समझ में आई होगी कि जिस मग से आप चॉकलेट ड्रिंक पी रहे हैं उसका रंग भी इस मज़े को प्रभावित करता है। शोधकर्ताओं की एक अन्तर्राष्ट्रीय टीम ने पता लगाया है कि नारंगी रंग के मग में हॉट चॉकलेट का स्वाद बढ़ जाता है। यह अध्ययन हाल के उस शोध की पुष्टि करता है जिसमें बताया गया कि जिस तरह के बर्तन, डिब्बे, बोतल या कागज़ में हमारा भोजन या पेय पदार्थ होता है, उसके रंग रूप पर निर्भर करता है कि हमारी इन्द्रियों को उसका किस रूप में बोध होता है। पॉलिटैक्रिक युनिवर्सिटी ऑफ वैलेन्सिया, स्पेन की शोधकर्ता बैटिना का कहना है कि "बर्तन का रंग भोजन के स्वाद और महक को बढ़ाता है।" **सौजन्य-राष्ट्रदूत, दि. २१.०१.०१३**

किशोरावस्था में शरीर हो कैसा?

जिन लोगों का किशोरावस्था से ही सुगठित शरीर होता है वे दीर्घायु होते हैं। स्वीडन के शोधकर्ताओं ने कहा कि ऐसे लोग कमजोर शरीर वाले युवकों की तुलना में ज्यादा जीवित रहते हैं रिपोर्ट के अनुसार कमजोर शरीर वालों के मानसिक रोगी होने की संभावना भी ज्यादा होती।

सौजन्य-राष्ट्रदूत, दि. १०.१२.०१२

इंसान की पहचान

-प्यारेलाल गुहा 'निडर'

दुख-दर्द जो दूसरों का बाँट न सके,
वह सच्चा इंसान हो नहीं सकता।
जो शान्ति और अमन का पैगान न दे,
वह धर्म और ईमान कहला नहीं सकता॥

जिन्दगी की राहें चाहे जितनी कठिन हों,
होसले के बगैर कोई मंजिल पा नहीं सकता।
खुदा पै यकीं रख, खुद पर भरोसा कर,
मुसीबत कोई गैर मददगार हो नहीं सकता॥

यहाँ आदमी की पहचान बड़ी मुश्किल है,
केवल चेहरा देखकर एतबार हो नहीं सकता।
राहबर भी राहजनों से मिले हैं यहाँ,
चोरों का रखवाला ईमानदान हो नहीं सकता॥

गिरगिट की तरह रोज रंग बदलने वाला,
कभी किसी का वफादार हो नहीं सकता।
यह दुनियाँ तो एक अजायब घर है 'निडर'
सबका रूप-रंग, मिजाज एक हो नहीं सकता॥

वक्त को देख फूंक-फूंक कर कदम रखें।
सभी पर यकीं करने वाला कामयाब हो नहीं सकता॥

-४३० कैलाशपुरी, मुगलसराय

सत्यार्थ प्रकाश प्रचार निधि दानदाता

(दिनांक १ अप्रैल से ३१ मई २०१३ तक)

१. चेतनप्रकाश, जोधपुर, २. अभिमन्यु भाटी, जोधपुर, ३. प्रमिला शर्मा, गुड़गाँव, हरियाणा, ४. योगेन्द्र कुमार आर्य, चित्तौड़गढ़, ५. अंकुर अग्रवाल, बंगाल, ६. अनिश कुमार, पश्चिम बंगाल, ७. विवेकानन्द, झारखण्ड, ८. विरेन्द्रकर, भुवनेश्वर, ९. नरेन्द्र देवदत्त आर्य, जम्मू, १०. कुलदीप गुप्ता, जम्मू-कश्मीर, ११. प्रेम रासोत्रा, जम्मू, १२. सुचेत गुप्ता, जम्मू, १३. ओम आर्यवीर ट्रेडर्स, उधमसिंह नगर, उत्तराखण्ड, १४. श्यामसिंह, सहारनपुर, १५. आदित्य प्रकाश गुप्त, सहारनपुर, उ.प्र., १६. आचार्य सत्येन्द्र, अजमेर।

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

प्रोफेसर रामप्रकाश

संक्षिप्त परिचय

शैक्षणिक योग्यता : एम.एस.सी. (ऑनर्स) पीएच.डी. (कैमेस्ट्री) रसायन विज्ञान में विश्लेषक, डी.एस. (होनोरिस कोजा)।

प्रतिष्ठित पद व कार्य

(क) पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़ में रसायन शास्त्र के प्रोफेसर तथा कई वर्षों तक सीनेटर।

(ख) कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के उपकुलपति।

(ग) हरियाणा विधानसभा के सदस्य व हरियाणा सरकार में मन्त्री।

(घ) हरियाणा प्रदेश कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष।

(ड.) वर्तमान में विगत ७ वर्षों से सांसद (राज्यसभा) के पद पर कार्यरत।

(च) वर्तमान में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलाधिपति पद पर प्रतिष्ठित।

विशेष : आर्यसमाज की युवा इकाई से लेकर अनेक महत्त्वपूर्ण संगठनों में विशेष भूमिका निभाई व निभा रहे हैं।

प्रकाशित पुस्तकें

१. वेद विमर्श, २. यज्ञ-विमर्श, ३. पण्डित गुरुदत्त विद्यार्थी, ४. सत्यार्थ प्रकाश विमर्श (ये सभी पुस्तक हिन्दी भाषा में) द वेदाज़ (अंग्रेजी में)। सम्पादन - पण्डित गुरुदत्त विद्यार्थी, लेखक - लाला लाजपत राय। वर्क ऑफ गुरुदत्त विद्यार्थी (दोनों अंग्रेजी में) एवं दण्डी जी की जीवनी (हिन्दी में)।

सम्मान : १. हरियाणा सरकार द्वारा प्रदत्त **हरियाणा रत्न।** २. धर्मानन्द आर्यभिक्षु पारितोषिक-२०००। ३. **घूड़मल प्रह्लाद कुमार** पारितोषिक-२००३। ४. आर्यसमाज मुम्बई द्वारा **वेद वेदाङ्ग** पारितोषिक-२००९। ५. गुरुकुल झज्जर द्वारा **विद्ववत् पारितोषिक**-२०१०

परोपकारी ज्येष्ठ शुक्ल २०७०। जून (द्वितीय) २०१३ ४३

Generated by Foxit PDF Creator © Foxit Software
http://www.foxitsoftware.com For evaluation only.

आर जे/ए जे/80/2013-2014 तक   प्रेषण : १५ जून, २०१३   RNI. NO. ३९५९/५९

प्रोफेसर रामप्रकाश

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलाधिपति

(सम्बन्धित विवरण पृष्ठ- ४३ पर)

प्रेषक:
परोपकारिणी सभा
दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर
(राजस्थान) - ३०५००१

आवरण :© MITTAL 9829797513

४४